११८५

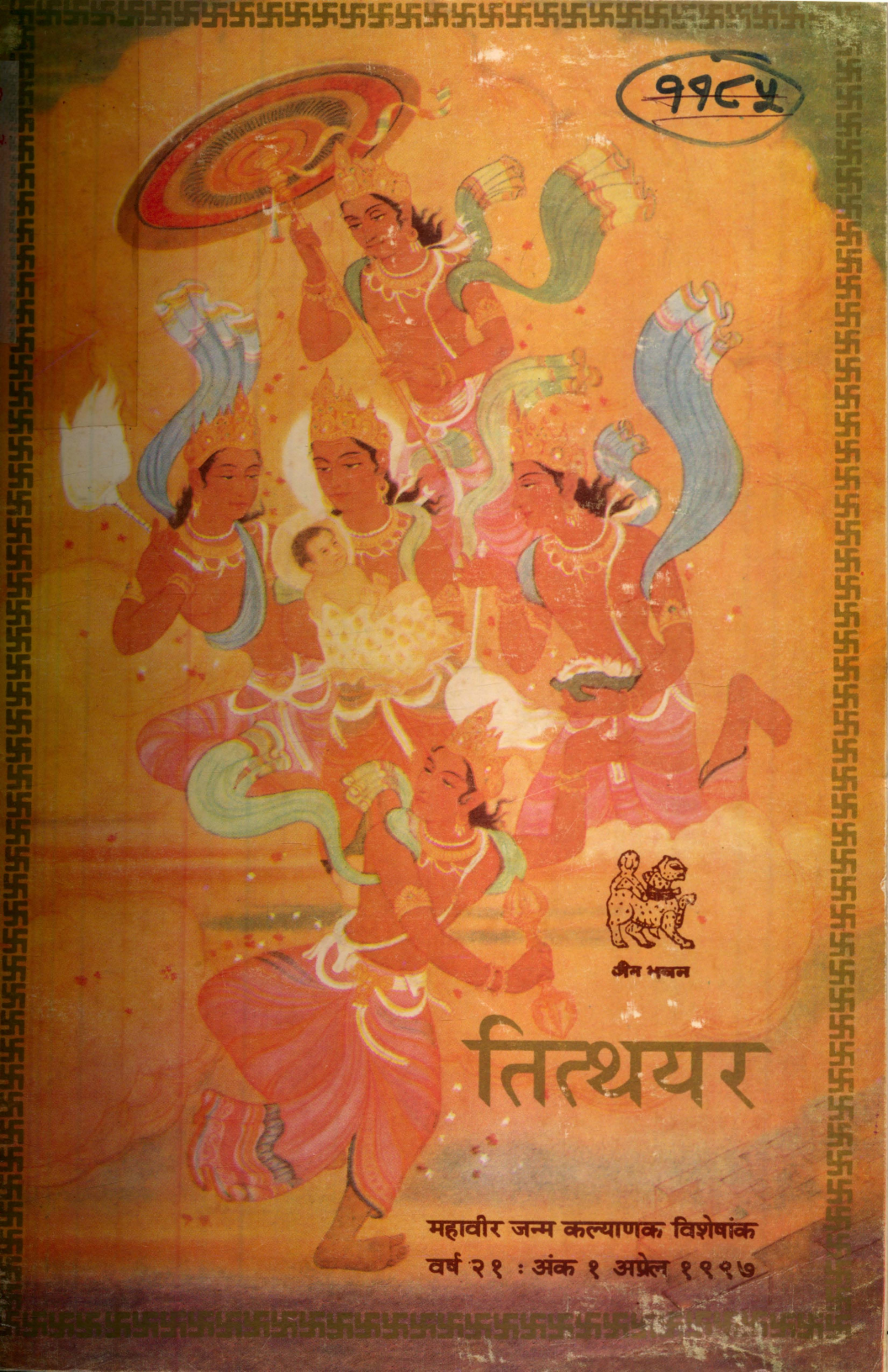

जैन भवन

तित्थयर

महावीर जन्म कल्याणक विशेषांक
वर्ष २१ : अंक १ अप्रेल १९९७

'जिसे तुम मारना चाहते हो वह तुम ही हो।'

Sethia Oil Industries Ltd.

Manufacturers of Rice Brain, D.O.B Mustard D.O.C, Neem deoiled Powder, ground nut Deoiled Cakes, Mahua deoiled cakes etc.

Plant
Post Box No. 5
Lucknow Road
Sitapur - 261001 (U.P)
Ph : 42017/397/073
Gram - Sethia - Sitapur
Fax : 42790

Registered Office
143, Cotton Street
Cal - 700 007
Ph : 2384329/
8471/5738
Gram - Sethia Meal

Executive Office
2, Indian Exchange Place
Calcutta - 700 007
Ph : 2201001/9146/5055
Telex : 217149 SO IN IN
Fax : 2200248

तित्थयर

श्रमण संस्कृति मूलक मासिक पत्र
वर्ष २१ अंक -१
अप्रेल १९९७

प्रेरक
परम पू. आचार्य श्री पदम सागर जी महाराज
उपध्याय श्री धरणेन्द्र सागरजी महाराज

प्रकाशक
जैन भवन
पी-२५, कलाकार स्ट्रीट
कलकत्ता-७०० ००७
दूरभाष : २३८ २६५५

मुद्रक
सुराना प्रिंटिंग वर्क्स
२०५, रवीन्द्र साराणी
कलकत्ता-७०० ००७
दूरभाष : २३९ ४३९३

संपादन
राजकुमारी बेगानी
लता बोथरा
भूपराज जैन
माला वैद

आजीवन सदस्यता : एक हजार रूपया
विशेषांक : पन्द्रह रूपया

Composed by : **POOJA COMPUTECH** • 7/1, Babulal Lane, Calcutta - 700 007 ✆ 230-0391

GREAT REFRESHER
OODLABARI
Royal
Fine Strong CTC Leaf Tea with Rich Taste
PACKED BY
THE OODLABARI COMPANY LTD.
NILHAT HOUSE, 11, R.N. MUKHERJEE ROAD
CALCUTTA-700 001
OODLABARI

सम्पादकीय

'भगवन् करुणा सिन्धौ सर्वशक्ति समन्वित, पुरतस्तवं दीनस्य प्रार्थनै कां नतस्य में'

(भगवान करुणासिन्धौ)

'हे सर्व शक्तिमान, करुणा सिन्धु भगवान
प्रणमित हूँ मैं, तुम्हें, हो नतमस्तक दीन '

जिस प्रकार प्राची से सूर्य उदित होता है और समस्त जगत प्रकाश से व्याप्त हो जाता है उसी प्रकार भारत की पवित्र, पावन धरा पर आज से लगभग २६०० वर्ष पूर्व एक ऐसी महान् आत्मा का उद्भव हुआ जिसने अपनी दिव्य देशना से जन मानस को एक अपूर्व ज्ञान का आलोक दिखाया। तप और त्याग की मूर्ति तीर्थंकर महावीर ने दर्शन की अनन्त गहरायी में जाकर सृष्टि के रहस्यों को उजागर किया तथा विश्व बन्धुत्व और विश्व मैत्री का मार्ग प्रशस्त किया। अहिंसा, अपरिग्रह तथा अनेकान्त की धूरी पर आधारित उनका दर्शन विश्व के लिए एक अमूल्य धरोहर है। भगवान महावीर के उपदेश किसी विशेष व्यक्ति, सम्प्रदाय या वर्ग के लिए नहीं वरन् सभी प्राणी मात्र के लिए है। कलिकाल सर्वज्ञ हेमचन्द्राचार्य जी ने लिखा है।

"नमो दुर्वार रागादि वैरिवार - निवारणे
अर्हते योगिनाथाय महावीराय तायिने" (योगशास्त्र)

अर्थात् जिनको जीतना कठिन है। ऐसे राग द्वेष आदि शत्रुओं के समूह का निवारण करने वाले, चार घाती कर्मों का नाश करने वाले योगियों के नाथ और प्राणी मात्र के संरक्षक भगवान महावीर को नमस्कार हो।

तीर्थंकरों का जीवन परिचय उनका तप, संयम, साधना और उनके दर्शन को जानना तथा स्वयं को उनकी तरह बनाने का प्रयास करना ही हर आत्मा का ध्येय होना चाहिए। किस प्रकार महावीर ने अपरिमित वैभव को त्याग कर वैराग्य और योग के उत्कृष्ट संघर्षमय पथ पर प्रयाण कर अपनी आत्मा पर पड़े कर्मों के बन्धनों को क्षय किया, इसी को समझने और आत्मसात करने से ही समग्र मानव जाति का मार्ग उन्नति की ओर प्रशस्त हो सकता है। श्रद्धेय ललवानी जी ने तित्थयर पत्रिका के माध्यम से महावीर दर्शन को अपने उत्कृष्ट रूप में जनमानस के सामने प्रस्तुत करने का जो प्रयास शुरु किया था उसी की धारा को अक्षुण्ण रखते हुए तित्थयर पत्रिका के इक्कीसवें वर्ष पर महावीर जन्म कल्याणक विशेषांक प्रकाशित कर रहे हैं। भगवान महावीर के उपदेश को जन-जन तक पहुँचाने का मेरा यह एक छोटा सा प्रयास है।

लता बोथरा

विषय - सूची

क्र. सं.	लेख	लेखक	पृ. सं.
१.	वीर स्तव	स्व. गणेश ललवानी	५
२.	भगवान महावीर	उपाध्याय धरणेन्द्र सागरजी	७
३.	१४ वीं शताब्दी के राजस्थान में भगवान महावीर के तीर्थ क्षेत्र	डा० शिवप्रसाद	८
४.	श्री जिनेन्द्र महावीर स्वामी	स्व जवाहरलाल लोढ़ा	१६
५.	श्रमण भगवान महावीर के देशना और उनके निहितार्थ	डा० रज्जन कुमार	१८
६.	भगवान महावीर का जन्म स्थान	श्री भंवरलाल नाहटा	२६
७.	वैष्णव जन तो तैने कहिए	डा० भानी राम	२९
८.	भगवान महावीर का बौधि स्थान	श्री नवीनचन्द्र शास्त्री	३४
९.	महावीर का वीतराग दर्शन	श्री चंचलमल चौरड़िया	३८
१०.	भगवान महावीर और नारी	श्रीमती राजकुमारी बेगानी	४४
११.	महावीर का महानत्व	स्व. अगरचन्द नाहटा	४९
१२.	मगध और जैन संस्कृति	स्व. हीरालाल दूगड़	५५
१३.	भगवान महावीर का तत्व दर्शन	श्रीचन्द चौरड़िया	६६
१४.	मूल्य एक अनेकान्त दृष्टि	डा० विजय कुमार	
१५.	एक विदेशी के बढ़ते कदम माँसाहार से शाकाहार की ओर		७३
१६.	संकलन		७५
१७.	महावीर वाणी		७७

वीरस्तव

स्व. गणेश ललवानी

वे थे खेदज्ञ,
कुशल और प्रत्युत्पन्नमति,
अनन्त ज्ञान और दर्शन सम्पन्न,
यशस्वी और लोकनन्दन।

वे थे लोकस्थित
समस्त जीवों के ज्ञाता और द्रष्टा,
तमःनाशी दीप-शिखा तुल्य
निर्मल आत्मधर्म के प्रकाशक।

वे थे क्रान्तदिक् और सर्वदर्शी,
उत्तम चरित्र सम्पन्न और धृतिमान्,
आत्मस्थित, विद्वान और मेधावी,
ग्रन्थिहीन, निर्भय और निरायुः।

वे थे सर्वज्ञ और अनियतचारी,
संसार समुद्र पारकृत और धीर,
सूर्य सम द्युतिमान और तेजःपुंज,
अग्नि सम तिमिर-विदार औज्वल्य।

"युद्ध करना है तो अपने आप से करो"
M/S. LALCHAND DHARAMCHAND
GOVT. RECOGNISED EXPORT HOUSE
12, India Exchange Place, Calcutta - 700 001, India Phone (B) 220 2074, 220 8958 (D) 220 0983,
220 3187 Cable : Swadharmi fax (033) 220975 Resi : 464 3235, 464 1541, Fax : (033) 464 0547

वे थे जिन प्रवर्तित
अनुपम धर्म के श्रेष्ठ नेता,
महान प्रभावशाली और शक्तिमान,
सर्वलोक नियन्ता और अद्वितीय वासव।

वे थे सागर सम प्रज्ञावान,
ज्ञान के महोदधि तुल्य दुरतिक्रम्य,
अनाविल और सर्वदोषहीन,
शक्र सम ऋद्धिसम्पन्न और तेजस्वी।

वे थे अमितवीर्य और साहसी,
सुमेरु पर्वत सम स्थिर और निरभिमान,
सर्वगुणों के आकार और सदाचारी
स्वर्ग सम नयनाभिराम और आनन्दमूल।

वे थे पृथ्वी सम सर्व सह और सर्वाधार
क्षीणकर्म, अभिलाषहीन और अपरिग्रही,
बन्धनहीन, मुक्त और अप्रतिबद्ध,
समस्त जीवों को अभयदानकारी और अनन्त चक्षु।

धर्म रूपी वृक्ष का मूल विनय है और उसका फल मोक्ष है।
विनय से मनुष्य को कीर्ति, प्रशंसा और श्रुतज्ञान आदि
समस्त इष्ट तत्वों की प्राप्ति होती है।

भगवान महावीर

उपाध्याय धरणेन्द्र सागरजी महाराज

२५०० वर्ष पूर्व एक राजकुमार ने जन्म लिया, जो भगवान महावीर के नाम से प्रसिद्ध हुए। उन्होंने जन्म से राज्य पाया, विवाह से परिवार बनाया। लेकिन उन्होंने सबकुछ त्याग दिया और स्वयं को निर्गंथ तथा अकिंचन बना लिया। भिक्षावृति थी परन्तु अधिकांश तप में निराहार रहते थे। इस सब पुरुषार्थ के लिये उस महापुरुष को महावीर कहना पड़ता है। क्योंकि कायोत्सर्ग की साधना में उनके समतुल्य कोई दूसरा नहीं ठहरेगा। क्योकिं उन्होंने स्वयं को जीत लिया था। क्योंकि स्वयं स्वयं का युद्ध बड़ा ही विकट होता है। उसमें से कैवल्य की सिद्धि होती है। अथात् जो मिश्रण होते हैं। वह सब घट जाता है। शेष रहता है-बुद्ध चैतन्य।

भगवान तो मूलतः हिंसा के विरोधी थे। भगवान ने अहिंसा रूपी शस्त्र से भटकते हुए प्राणियों के हृदय परिवर्तन किये। आज हम एक तरफ भावात्मक एकता की बातें करते हैं दूसरी तरफ भ्रामकतथ्य स्कूल कालेज मे पढ़ाया जाता है कि मांसाहार न करना असंदिग्ध धर्म है। जब हम किसी के जीवन को दे नहीं सकते तो उसको लेने का हमारा क्या अधिकार है? जब हमारा जीव अपना पराया करता है तब हिंसा का जन्म होता है। जब यह भेद मिट जाता है तब अहिंसा का उदय होता है। भगवान राम को रावण से अस्त्र युद्ध करना पड़ा। कृष्ण को शिशुपाल तथा कंस के साथ युद्ध करना पड़ा। परन्तु भगवान महावीर को अहिंसा के विरोध में कोई शस्त्र नहीं उठाना पड़ा। उन्होने अपनी वाणी (उपदेश) के द्वारा ही हिंसक को अहिंसक बनाया।

आप की जीभ बोलती है तो उसकी आवाज कानों तक पहुंचती है। किन्तु जब आपका जीवन बोलने लगता है तो उसकी आवाज कानों को भी पार करके हृदय तक पहुंच जाती है। अतः आप जीभ से नहीं अपितु जीवन से बोलना सीखिये। जीभ की ध्वनि मर्यादित तथा क्षणिक है, जीवन की आवाज अभयर्दित तथा चिर सत्य है। भगवान महावीर का जीभ के बदले जीवन ही अधिक बोलता था। इसलिये उनकी वाणी, आवाज युग-युग तक जीवित और प्रतिध्वनित रहेगी। आज हमारी जीभ बोलती है किन्तु उस वाणी में प्रभाव और शक्ति नहीं है।

"शुद्ध आचरण ही धर्म है।"
NIRMALA BOTHRA
7/1/A, Nafar Kundu Road, Calcutta - 700 026, Phone : 475-5503

१४वीं शताब्दी के राजस्थान में भगवान महावीर के तीर्थ क्षेत्र

डा० शिव प्रसाद

रवरतरगच्छालंकार, सुल्तान मुहम्मद तुगलक प्रतिबोधक,युगप्रधानाचार्य जिनप्रभसूरि द्वारा रचित, कल्पप्रदीप अपरनाम विविधतीर्थकल्प [१] सम्पूर्ण जैन साहित्य में एक अद्वितीय ग्रन्थ है।

यह वि० सं० १३८९/ ई. सन् १३३३ में योगिनीपुर पत्तन (दिल्ली) में पूर्ण हुआ, जैसा कि इसकी प्रशास्ति [२] से स्पष्ट है–

नन्दा-ऽनेकप शक्ति शीतगुमिते श्रीविक्रमोपते वर्षे
भाद्रपदस्य मास्यवरजे सौम्ये दशम्यां तिथौ।।
श्री हम्मीरनृहम्मदे प्रतपति दंस्मामण्डलाखण्डले
ग्रन्थोदयं परिपूर्णतामभजत श्रीयोगिनीपत्तने।।३।।
तीर्थानां तीर्थभक्तानां कीर्तनेन पवित्रितः।
कल्पप्रदीपनामाऽयं ग्रन्थो विजयतां चिरम्।।४।।

इस ग्रन्थ में लगभग ४० जैनतीर्थों का कल्परूप में अलग-अलग विवरण प्रस्तुत किया गया है। इनके अतिरिक्त चतुरशीति महातीर्थनामसंग्रह कल्प नामक स्वतंत्र अध्याय के अन्तर्गत २४ तीर्थंकरों से सम्बन्धित तीर्थस्थानों का अलग-अलग नामोल्लेख किया गया है। यह एक अत्यन्त महत्वपूर्ण अध्याय है। इस निबन्ध में, उक्त अध्याय में उल्लिखित भगवान महावीर से सम्बन्धित वर्तमान राजस्थान प्रान्त में अवस्थित कुछ तीर्थक्षेत्रों का विवरण प्रस्तुत किया जा रहा है।

उपकेशपुर (ओसिया)

कल्पप्रदीप में उपकेशपुर का जैन तीर्थ के रूप में उल्लेख है और यहां भगवान महावीर के मंदिर होने की बात कही गयी है।[३]

उपकेशपुर आज ओसिया के नाम से जाना जाता है। प्रतिहार और चाहमान युग में यह एक प्रसिद्ध नगरी के रूप में प्रतिष्ठित रही। प्रतिहार नरेश वत्सराज (ई. सं. ७७५-८००) के समय यहां महावीर जिनालय का निर्माण कराया गया। यह

सत्य यश का मूल है, सत्य विश्वास का परम कारण है,
सत्य स्वर्ग का द्वार है और सत्य ही सिद्धि का सोपान है।

बात उक्त जिनालय से प्राप्त वि० सं० १०१३/ई. स. ९५७ के एक लेख से ज्ञात होती है।[४] प्रतिहार और चाहमान युगों में यह नगरी ब्राह्मणीय और जैनधर्म के केन्द्र के रूप में विख्यात रही। मध्ययुग में भी इसकी प्रतिष्ठा विद्यमान रही। आज यहां ब्राह्मणीय और जैन धर्म से सम्बद्ध १६ मंदिर विद्यमान है जो कला की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं इनमे भगवान महावीर का मंदिर स्थापत्य की दृष्टि से सर्वोकृष्ट माना जाता है।[५] वत्सराज के समय इसका निर्माण हुआ और १० वीं-११ वीं. शती में इसे पुनर्निर्मित कराया गया। इसके निर्माण में महामारु शैली का प्रयोग हुआ है। इस जिनालय से १५ अभिलेख प्राप्त हुए हैं जो वि. सं. १०१३ से लेकर वि. स. १६५८ तक के हैं।[६]

उपकेशपुर से ही श्वेताम्बर श्रमण संघ की एक शाखा उपकेशगच्छ अस्तित्व में आयी। यह गच्छ भगवान पार्श्वनाथ से अपनी परम्परा जोड़ता है। इस गच्छ से सम्बद्ध बड़ी संख्या में साहित्यिक और अभिलेखीय साक्ष्य प्राप्त होते है जो विक्रम सम्वतं की १० वीं शताब्दी से लेकर २० वी शताब्दी तक के है।

मुस्लिम आक्रमणों से यहाँ के जिनालयों को भी पर्याप्त क्षति उठानी पड़ती रही, परन्तु समय-समय पर उनका जीर्णोद्वार होता रहा। यह बात यहां से प्राप्त अभिलेखों से ज्ञात होता है। यहां के जिनालय स्थापत्य कला की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं।

नन्दिवर्धन (नांदिया)

कल्पप्रदीप के अन्तर्गत नन्दिवर्धन (नांदिया) का भी जैन तीर्थ के रूप में नाम मिलता है और यहां महावीर स्वामी के जिनालय होने की बात कही गयी है।

नन्दिवर्धन आज नादियां के नाम से जाना जाता है। उत्तरकालीन जैन मान्यतानुसार भगवान के ज्येष्ठ भ्राता नन्दिवर्धन ने इस तीर्थ की स्थापना की थी इसी कारण इस तीर्थ का नाम नन्दिवर्धन पड़ा।[१०]

ग्राम के बाहर भगवान महावीर का एक प्राचीन जिनालय विद्यमान है। इस जिनालय में वि. सं. ११३०, १२०१, १२५३, १२९०, १४९३, १५२१ और १५२९ के लेख विद्यमान हैं। इस जिनालय में आज ७७ जिनप्रतिमायें रखी हुई हैं।[१२]

"सत्य के प्रभाव से मनुष्य महासमुद्र में भी सुरक्षित रहते हैं।'
PRITAM ELECTRICAL & ELECTRONICS (P) LTD.
22, Rabindra Sarani, Calcutta - 73
Shop No. G - 136 • Tel : (033) 26 2210

नाणा (नाना)

कल्पप्रदीप में नाणा का जैन तीर्थ के रूप में उल्लेख करते हुए यहां भगवान महावीर के मंदिर होने की बात कही गयी है।[१३]

नाणा आज नाना के नाम से जाना जाता है। यह स्थान अहमदाबाद अजमेर रेलवे लाइन के मध्य नाना नामक स्टेशन से तीन मील दूर स्थित है। जीवन्तस्वामी की प्रतिमा के कारण यह स्थान जैन तीर्थ के रूप में प्रसिद्ध रहा है। यहां स्थित महावीर जिनालय में १० वीं शताब्दी का एक लेख प्राप्त हुआ है। मुनि जयन्तविजय जी[१४] ने इसकी वाचना दी है, जो इस प्रकार हैः

.....षथ
.....जिन
.....भवतरं
(संव) त् १०१७

उक्त लेख के आधार पर यह कहा जा सकता है कि भगवान महावीर का उक्त जिनालय १० वीं शताब्दी के आस-पास ही निर्मित हुआ होगा। इस जिनालय से वि.स.११६८ से १६५९ तक के कई लेख प्राप्त हुए है[१५] जिनमें जिनालय के जीर्णोद्धार, नवीन जिन प्रतिमाओं की प्रतिष्ठा आदि का उल्लेख हैं।

नाणा से ही ११वीं शती के आसपास नाणकीयगच्छ[१६] अस्तित्व में आया और १६ वीं शती तक अस्तित्व में रहा। श्वेताम्बर सम्प्रदाय के चैत्यवासी गच्छों में इसका महत्वपूर्ण स्थान है। शांतिसूरि इस गच्छ के पट्टधर आचार्य माने जाते हैं। उनके बाद सिद्धसेनसूरि, धनेश्वरसूरि और महेन्द्रसूरि क्रमानुसार गच्छनायक बने। अन्यान्य चैत्यवासी गच्छों की भांति इस गच्छ के पट्टधर आचार्यों को उक्त नाम पुनःपुनः प्राप्त होते हैं। इस गच्छ के मुनिजन प्रायः पठन-पाठन से दूर रह कर जिन मंदिरों और उपाश्रयों की देखरेख में ही अपना सम्पूर्ण समय व्यतीत करते रहे। श्रावकों को नूतन जिनालयों एवं जिन प्रतिमाओं के निर्माण कराने की प्रेरणा देना और अत्यन्त आडम्बरपूर्वक प्रतिष्ठा करना ही इनका प्रधान काये रहा। विधिमागीय आचार्यों द्वारा समय-समय पर चैत्यवास के प्रबल विरोध के बाद भी दीर्धकाल तक चैत्यवासी गच्छों

जिसकी जड़ सूख गई है वह वृक्ष सींचने पर भी हरा-भरा नहीं होता है।
इसी प्रकार मोहनीय कर्म के क्षीण हो जाने पर
कर्मों की उत्पत्ति नहीं होती,कर्मबंध नहीं होता।

का आस्तित्व बना रहना समाज पर इनके व्यापक प्रभाव का परिचायक हैं।

पल्ली (पाली)

कल्पप्रदीप में पाली का भी जैन तीर्थ के रूप में उल्लेख है और यहाँ भगवान महावीर के मंदिर होने की बात कही गयी है।

पूर्वमध्ययुग में इस नगरी का राजनैतिक एवं धार्मिक दृष्टि से विशेष महत्व रहा । पल्लीवाळ ब्राह्मणों, वणिकों और श्वेताम्बर श्रमण संध की एक उपशाखा- **पल्लीवालगच्छ**[१८] की उत्पति इसी नगरी से मानी जाती है। अभिलेखीय साक्ष्यों में इस नगरी के कई नाम- पल्लिका, पाल्लिका, पाल्ली, आदि मिलते हैं। पश्चिमी भारत के स्थापत्यकला के विकास में भी इस नगरी का विशेष महत्व रहा है।[१९] यहाँ के मंदिरो में पश्चिमी भारत की दो स्थापत्य शैलियों - महापाठ और महागूर्जर के दर्शन होते है। इस दृष्टि से यहां स्थित नौलखा मंदिर उत्कृष्ट उदाहरण माना जा सकता है। इसका मूल प्रासाद महागूर्जर और गूढमंडप महामाठ शैली में निर्मित है।[२०]

पालीका जैन तीर्थ के रुप में सर्वप्रथम साहित्यिक उल्लेख यशोभद्रसूरिगच्छीय सिद्धसेनसूरि[२१] द्वारा रचित **सकलतीर्थस्तोत्र** (रचनाकाल वि० सं० ११२३/ई० सं०-१०६७ के आसपास) में प्राप्त होता है। यहाँ स्थित नवलखा पार्श्वनाथ जिनालय से कई लेख प्राप्त हुए हैं जिनसे ज्ञात होता है कि यह जिनालय महावीर को समर्पित था।[२३] इसी जिनालय से वि० सं० १६८६/ ई०सं० १६२९ के भी लेख मिले हैं, जिससे ज्ञात होता है कि उक्त वर्ष में इस जिनालय का जीर्णोद्धार कराया गया और मूलनायक के रूप में पार्श्वनाथ की प्रतिमा स्थापित की गयी।[२४]

यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि महावीर का जिनालय पार्श्वनाथ के जिनालय के रूप में कैसे परिवर्तित हो गया । ऐसा प्रतीत होता है कि पश्चिमी भारत पर हुए मुस्लिम आक्रमणों के दरम्यान यहां स्थित जिनालय को भी पर्याप्त क्षति उठानी पड़ी होगी। परम्परानुसार किसी घोरी सुल्तान ने यहां आक्रमण किया था। **तवारिक फरिस्ता** (ई० सं० १६वीं शती का अतिम चरण) के अनुसार कुतुबुद्दीन ऐबक ने पाली पर अधिकार कर लिया था।[२५] ई० स० ११९७ में उसने अणहिलवाड़ पर आक्रमण

अहिंसा अमृत है, हिंसा विष है
M/S. CREATIVE LIMITED
12, Dargah Road, Post Box No. 16127 Calcutta - 700 017
Tel : (033) 240-3758/1690/3450/0514 Fax : (033) 2400098, 2471833

किया और इसी समय पाली और नाडोल पर भी अधिकार कर लिया। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि ई० सं० की १२ वीं शताब्दी के अन्त तक यह क्षेत्र मुस्लिम अधिकार में आ चुका था। वि० सं० १६८६/ई० स० १६२९ में जब इस जिनालय का जीणाद्धार कराया गया, उस समय तक लोग यह भूल चुके थे कि यह किस तीर्थंकर का मंदिर है और उन्होंने वि० सं० १६८६ में पार्श्वनाथ की प्रतिमा यहां प्रतिष्ठापित कर दी।[२६] यह स्थान जोधपुर से ७२ किलोमीटर दक्षिण- पश्चिम में स्थित है।

मुण्डस्थल (मुंगथला)

आचार्य जिनप्रभसूरि ने भगवान महावीर के तीर्थ के रूप में मुण्डस्थल का भी उल्लेख किया है। यह तीर्थ अर्बुद मण्डल के सिरोही जिले में अवस्थित है और आज मुंगथला के नाम से जाना जाता है। यहां वि. सं. ९२५/ई. स. ८३९ का एक शिवालय विद्यमान है, जिसके आधार पर कहा जा सकता है कि ई. स. की ९ वीं शताब्दी में यह नगरी अस्तित्व में आयी होगी।[२७]

पूर्वमध्ययुग में यह स्थान जैन तीर्थ के रूप में प्रसिद्ध हुआ। उत्तरकालीन जैन मान्यतानुसार भगवान् महावीर ने छद्मस्थ रूप में यहाँ विहार किया था और बाद में केशी गणधर ने यहाँ उनका मंदिर बनवाया। यह बात अचलगच्छीय आचार्य महेन्द्र सूरि द्वारा रचित **अष्टोत्तरी तीर्थमाला**[२८] तथा यहां स्थित एक खंडित मंदिर के गर्भगृह के मुख्य दरवाजे पर उत्कीर्ण वि० सं० १४२६ के शिलालेख से ज्ञात होती है। मुनि जयन्त विजय ने इस लेख की वाचना दी है, जो इस प्रकार हैः

पूर्वे छद्मद्यस्थकालेऽर्बुदभुवि यमिनाः कुर्वतः सद्विहारं

(सप्तं) त्रिंशे च वर्षे वहति भगवतो जन्मतः कारितास्ताः (सा)

श्री देवार्यस्य मस्योल्लसदुपलमयी पूर्णराजेन राज्ञा

श्रीकेशीसु (शिला) प्रतिष्ठः स जयति हि जिनस्तीर्थमुंडस्थलस्तुः(स्थः)।।

सं (०) १४२६ संवत् श्रीवीरजन्म ३७.....

श्रीवीरजन्म ३७ श्री देवा जारू पू०.....न कारितं।।

अर्बुदान्चलप्रदक्षिणा जैन लेख संदोह लेखांक[४८]

जो चण्ड है,अज्ञ है,स्तब्ध है,अप्रियवादी है,मायावी है और शठ है,
वह अविनीतात्मा संसार के प्रवाह में उसी प्रकार प्रवाहित होता रहता है,
जैसे नदी के प्रवाह में पड़ा हुआ काष्ठ।

उक्त खंडित जिनालय से वि० सं० १२२६ से १६८६ तक के लेख प्राप्त हुए है। इस जिनालय का निर्माण कब किसने कराया, इस सम्बन्ध में कोई जानकारी नही मिलती । वि० सं० १७२२ में रची गयी एक तीर्थमाला में भी इस तीर्थ का उल्लेख है और यहां जिनालय में १४५ जिनप्रतिमाओं के होने की बात कही गयी है।[३०] धीरे-धीरे यह नगरी उजड़ गयी और आज एक साधारण ग्राम मात्र के रूप से अवशिष्ट है।

सत्यपुर (सांचोर)

भगवान महावीर से सम्बद्ध यह तीर्थस्थान भी जालौर जिले में ही अवस्थित है और आज सांचोर के नाम से जाना जाता है। चौलुक्य नरेश मूलराज प्रथम के वि० सं० १०५१/ई० स० ९९६ के एक दानपत्र में इस नगरी का सर्वप्रथम उल्लेख पाया जाता है।[३१] यहाँ स्थित महावीर जिनालय का सर्वप्रथम उल्लेख धनपाल द्वारा रचित **'सत्यपुरमहावीर जिनोत्साह'**[३२] नामक स्तोत्र में पाया जाता है। आचार्य जिनप्रभसूरि ने कल्पप्रदीप के अन्तर्गत इस तीर्थ के इतिहास का सुन्दर विवरण दिया है।[३३] उन्होंने यहां वि० सं० १०८१, १३४८,१३५६ और १३६७ मे हुए मुस्लिम आक्रमणों का रोचक विवरण प्रस्तुत किया है । १२वीं, १४वीं शताब्दी में यह स्थल एक चमत्कारिक जैन तीर्थ के रूप में विख्यात रहा इसी कारण मुस्लिम आक्रमणकारियों द्वारा यह बार-बार नष्ट किया जाता रहा। वैसे तो यहाँ आज ५ जिनालय विद्यमान हैं, परन्तु वे सभी आधुनिक काल के हैं। यहाँ का प्राचीन जिनालय सर्वथा नष्ट हो चुका है।

संदर्भ

१. मुनिजिनविजय, संपा. कल्पप्रदीप अपरनाम विविधतीर्थकल्प, सिंघी जैन ग्रन्थमाला, ग्रंथांक ६, शांतिनिकेतन १९३४ ई०
शिवप्रसाद, जैनतीर्थों का एतिहासिक अध्ययन, पार्श्वनाथ विद्याश्रम ग्रन्थमाला ग्रंथांक ५६ वाराणसी १९९० ई.

२. विविधतीर्थकल्प प्रशस्ति, पृष्ठ १०९

३. चतुरशीतिमहातीर्थानामसंग्रहकल्प

"स्वर्ग और नरक मनुष्य के हाथ में है।"
P. C. JAIN
B-14 Sarvodaya Nagar Kanpur - 208005
Phone : 295552, 295955

विविधतीर्थकल्प, पृष्ठ ८५-८६

४. पूरनचन्द नाहर, जैन लेख संग्रह, भाग१, लेखांक ७८८

५. M. A. Dhaby "Jain Temples of Western India"
Mahavir Jain Vidyalaya Golden Jubilee Volume Vol 1, Bombay 1960 A.D. Pp- 312-327

६. नाहर, पूर्वोक्त, लेखांक ७८८-८०२

७-८ शिवप्रसाद, ''उपकेशगच्छ का इतिहास'' श्रमण वर्ष ४२, अंक ७-१२ पृष्ठ ६१-१८२

९. विविधतीर्थकल्प पृष्ठ ८६.

१०. मुनिजयन्तविजय, अर्बुदाचलप्रदक्षिणा यशोविजयजैन ग्रन्थमाला, भावनगर वि० सं० २००४, लेखांक २५४-२६०

११. मुनिजयन्तविजय, अर्वुदाचलप्रदक्षिणा जैन लेख संदोह, यशोविजयजैन ग्रन्थमाला, भावनगर वि० सं० २००५, लेखांक ४५२-४६९

१२. अम्बालाल प्रेमचन्दशाह,जैनतीर्थसर्वसंग्रह भाग १-२, अहमदाबाद वि० सं० २०१०, पृष्ठ ३३३-३३४

१३. विविधतीर्थकल्प, पृष्ठ ८६

१४. अर्बुदाचलप्रदक्षिणा जैन लेख संदोह, लेखांक ३४१

१५. वही लेखांक ३४२-३६४.

१६. शिवप्रसाद, ''नाणकीयगच्छ का इतिहास'' श्रमण, वर्ष ४० अंक ७, पृष्ठ २-३४.

१७. विविधतीर्थकल्प, पृष्ठ ८६.

१८. शिवप्रसाद, ''पल्लीवालगच्छ का इतिहास'' (अप्रकाशित)

वही ऋषि है, वही मुनि है, वही संयत है, और वही भिक्षुक है
जो शुद्ध ब्रह्मचर्य का पालन करता है।

१९-२०. Dhaby Ibid, Page. 332-333.

२१. शिवप्रसाद, "यशोभद्रसूरिगच्छ"

डा० शशिकान्त जैन तथा अन्य, संपा• **शोधादर्श** वर्ष १९९५ अंक २७, पृष्ठ २४७-२४९

२२. C. D. Dalal, Ed. A Descriptive Catalogue of Palm Leaf Mss in the **Jain Bhandars at Pattan,** G. O. S No.76 Baroda (1937 A. D. P-155-156.

२३. नाहर, पूर्वोक्त, लेखांक ८०९-८१५

२४. वही, लेखांक ८२५-८२७.

२५-२६. **जैनतीर्थों का ऐतिहासिक अध्ययन,** पृष्ठ १९५. १९६

२७. **जैनतीर्थ सर्वसंग्रह.** भाग १ खंड२, पृष्ठ २७९-२८१

२८. **विधिगच्छीयपंथप्रतिक्रमणसूत्राणि** में प्रकाशित

२९. **अर्बुदाचल प्रदक्षिणा जैन लेख संदोह,** लेखांक ४४- ५२

३०. विजयधर्मसूरि, संपा. **प्राचीनतीर्थमालासंग्रह,** भावनगर वि० सं० १९७८, भाग २, पृष्ठ ६०

३१. Sten Konow, "Babra Plats of Mulraj I. Samvat 1051" **Epigraphic Indica,** Vol X, 1909- 1910 A. D. Reprint New Delhi 1984, PP- 76-79

३२. मुनि जिनविजय द्वारा संपादित **जैन साहित्य संशोधन** वर्ष ३ अंक २ में प्रकाशित

३३. "सत्यपुरतीर्थकल्प", **विविधतीर्थकल्प,** पृष्ठ २८-३०

३४. **जैन तीर्थों का ऐतिहासिक अध्ययन,** पृष्ठ २०२-२०६.

"मोह रहित मनुष्य दुःख मुक्त है"

M/s. Surana Motors Pvt. Ltd.

24A, Shakespeare Sarani, Calcutta - 700 071

'PARIJAT' 8th Floor, Phone : 247-7450/5264

–: श्री जिनेन्द्र महावीर स्वामी :–

स्वः जवाहरलाल लोढ़ा

भारत के भूतपूर्व महामहिम राष्ट्रपति डा० राधाकृष्णन ने कानस्टीट्यूशन क्लब नई दिल्ली में सन् १९५५ में भगवान महावीर जयन्ती के पुनीत अवसर पर जो भाषण अंग्रेजी में दिया था, उसके हिन्दी अनुवाद का अधिकांश भाग यहाँ साभार दिया जा रहा है। महावीर को 'जिन' अर्थात् विजेता की उपाधि प्राप्त है। किन्तु उन्होंने किसी देश को नही जीता। उन्होंने विजय प्राप्त की थी अपने अन्तरंग पर। वे 'महावीर' कहलाए इस कारण नहीं कि उन्होंने संसार के किन्हीं युद्धों में भाग लिया हो, किन्तु उन्होने अपनी आत्मवृतियों से युद्ध कर उन पर विजय प्राप्त की थी। दृढ़ता के साथ तप, संयम और आत्मबुद्धि एवं ज्ञान उपासना के द्वारा उन्होंने मनुष्य जीवन में ही देवत्व प्राप्त कर लिया था। अतः हम जो उनकी जयन्ती मना रहे है, उसका ध्येय यही है कि उनके उदाहरण से दूसरों को भी आत्म-विजय के उच्च आदर्श की ओर बढ़ने की स्फूर्ति मिल सके। मनुष्य का व्यक्तित्व कोई ऐसी वस्तु नहीं है जो केवल संसार चक्र में फेंक दी गई हो। वह सजीव है जिसके कारण उसका दर्जा प्रकृति और समाज के भौतिक वातावरण से ऊंचा उठा हुआ है। यदि हम मानवीय आत्मा आभ्यन्तर तत्व को नहीं पहचान सकते तो हम अपने आपको नष्ट कर बैठते हैं। हममें से अधिकांश सांसारिक आसक्तियों में ही अपने को खो बैठे हैं। हम भौतिक पदार्थों, स्वास्थ्य, धन-सम्पति, घर-द्वार में ही अपने को भूले हुए हैं। हम स्वयं इनके वशीभूत हो गये हैं। वे हमारे आधीन नहीं रहे। ऐसे व्यक्ति अपनी आत्मा का घात करते हैं-वे ही आत्माहन्ता जन कहलाते है। इसलिए नाना ग्रंथकारों ने कहा है कि वही मनुष्य है जो संसार की समस्त विभूति के लिए करता है। जो सर्वदा स्वाधीन हो जाता है वही "अर्हत"है। वह जन्म मरण तथा काल के वशीभूत नहीं रहता ।

भगवान महावीर हमारे सम्मुख एक ऐसे आदर्श पुरुष के रूप मे उपस्थित है जिन्होंने संसार के सब पदार्थों का परित्याग किया और जो भौतिक बंधनों में फंसकर नहीं रहे।

क्रोध मनुष्य की आयु को नष्ट करता है तथा क्रोध से मानसिक दुःख होता है।
क्रोधी मनुष्य पाप कर्म को बाँध कर नरक में जाता है और वहाँ नाना प्रकार के दुःखों को भोगता है,
यह समझकर क्रोध का त्याग करना चाहिए।

आत्मतत्व के आदर्श पर हम किस प्रकार चलें, किन साधनो के द्वारा हम इस आत्मानुभव और स्वाधीनता की प्राप्ति कर सकते हैं इन प्रश्नों के उत्तर हमारे शास्त्र बतलाते हैं कि यदि हम आत्मज्ञान प्राप्त करना चाहते हैं, तो हमें श्रवण, मनन और निदिध्यासन का अभ्यास करना चाहिए। महावीर भगवान् ने दर्शन, ज्ञान और चरित्र के निर्देश द्वारा इन तीन तत्वों का प्रतिपादन किया है। हम में विश्वास होना चाहिए, श्रद्धा होनी चाहिए कि सांसारिक वस्तुओं के परे भी कोई अधिक उत्कृष्ट पदार्थ है। केवल अंध-भक्ति से काम नहीं चलेगा। हमें ऐसा ज्ञान प्राप्त करना चाहिए जो मनन द्वारा प्राप्त होता है। चिंतन के द्वारा ही श्रद्धा और विश्वास के आधार भूत विषयों को ज्ञान और प्रकाश के तत्वों में परिवर्तित किया जा सकता है। किंतु केवल सैद्धातिक ज्ञान भी पर्याप्त नहीं है। वाक्यार्थज्ञानमात्रेणनामृत केवल शब्द ज्ञान द्वारा जीवन प्राप्त नहीं किया जा सकता। हमें उन महान् सिद्धांतों को अपने जीवन में भी उतारना चाहिए। अतः चरित्र का होना भी उतना ही अनिवार्य हैं। हम दर्शन, प्राणिपात, अथवा श्रवण से प्रारम्भ करके मनन पर पहुँचते हैं और वहां से फिर निदिध्यासन, सेवा या चरित्र पर। जैन आचार्यों ने बतलाया है कि आत्मानुभाव की प्राप्ति के लिए इन तीनों की परमावश्यकता है। चरित्र अर्थात् सदाचार के कौन से नियम हैं? इसके लिए विविध व्रतों के धारण करने का उपदेश दिया गया है। प्रत्येक जैन को पांच व्रत धारण करना आवश्यक होता है-अहिंसा की ही प्रधानता है। यद्यपि इस संसार में हिंसा से सर्वथा अपने को बचाना असम्भव हैं। हमारा यह कर्त्तव्य है कि जहाँ तक हो सके अहिंसा के क्षेत्र का विस्तार किया जाये। इस प्रकार अहिंसा वह आदर्श है जिसे हमने अपना लक्ष्य बिंदु बनाया है।

इस प्रकार भगवान महावीर के जीवन से संयम की आवश्यकता, अहिंसात्मक सदाचार, सहिष्णुता तथा दूसरों के दृष्टिकोण का समुचित मूल्यांकन आदि अनेक पाठ सीख सकते हैं। यदि हम इन बातों को स्मरण रख सकें और इन सिद्धातों को अपने हृदय में भली प्रकार अंकित करें तो हम उस महापुरुष के प्रति अपने ऋण का कुछ परिशोध करने में सफल हुए कहे जा सकेंगे।

"पहिले बनो फिर बनाओं"
M/S. J. KUTHARI PVT. LTD.
12, India Exchange Place, Calcutta - 700 001
✆ 220-3142, Resi : 475-0995

श्रमण भगवान् महावीर की देशना और उसके निहितार्थ

डॉ.रज्जन कुमार

श्रमण भगवान महावीर जैन परम्परा में मान्य तीर्थंकरों में सबसे अन्तिम तीर्थंकर थे। इनमें तीर्थंकरों में पायी जाने वाली सारी विलक्षणताएँ विद्यमान थीं, परन्तु इनके व्यक्तित्व में कुछ ऐसी विशेषताएँ थी जो इन्हे अन्य तीर्थकरों से अलग कर देती हैं। ये बहुविध प्रतिभा के धनी होने के साथ-साथ मौलिक चिन्तक भी थे। इनका चिंतन सरल, सुबोधगम्य होने के साथ-साथ गंभीर एवं दार्शनिक समस्याओं से भी परिपूर्ण होता था। उनकी दृष्टि में सभी जीव समान होते हैं, इनमें किसी प्रकार का अंतर नही होता हैं। दूसरे ही क्षण वे विभिन्न जीवों के बारे में विचार करने लगते हैं और इनकी भिन्नता के कारणों को भी स्पष्ट करते हैं। कभी वे व्यक्तिगत साधना की महानता का बखान करते हैं तो उसी पल परस्परता की भी व्याख्या करने लगते हैं। एक और वे मनुष्य को सामाजिक दायित्व के निवर्हन का संदेश देते है तो दूसरी ओर वे मनुष्य जीवन स्वीकार करने की बात करते हैं। उसी तरह के बहुविध परस्पर विरोधी चिन्तन उनके विचारों में मिल जाते हैं। इन्हे वे प्रायः अपनी देशनाओं में व्यक्त करते रहते थे तथा उनका समाधान भी प्रस्तुत करते थे। इनके आधार पर वे मनुष्यों को सम्यक् सत्य का दिग्दर्शन कराना चाहते थे।

समता

जीवन-मृत्यु, शत्रु-मित्र, जय-पराजय, प्रशंसा-निंदा, मान-अपमान, सुख-दुख ऐसे असंख्य युग्म संसार में है। ये व्यक्ति के मन को विभिन्न प्रकार से आघात पहुँचाते हैं। उनके कारण उसके मन का संतुलन बिगड़ जाता है। वह विषम हो जाता है और द्वन्द्व का जीवन जीने को विवश हो जाता है। द्वन्द्व के इस आधात से बचने के लिए महावीर ने समता की साधना के मार्ग का अन्वेषण किया। उन्होनें समता को प्राणी का स्वभाव अथवा धर्म कहा।[१] इसके आधार पर उन्होंने मनुष्यों को सभी परिस्थितियों में सम बने रहने की प्रेरणा का मार्ग प्रदान किया। समता की प्रेरणा मनुष्य के मन में उत्पन्न होने वाली विकृतियों को शमन कर देती है। वह शत्रु-मित्र मणि-पाषाण, सुवर्ण-मृतिका जैसे भिन्न और विपरीत प्रकृति वाले तत्वों के प्रति समान

जैसे जले हुए बीजों से फिर अंकुर उत्पन्न नहीं होते
उसी प्रकार कर्मरूपी बीजों के जल जाने पर भव रूप अंकुर उत्पन्न नहीं होता है।

भाव रखने लगता है।[२] उनके कारण उसके मन में किसी प्रकार का राग-द्वेष नहीं उत्पन्न होता है। उसके मन में सभी जीवों के प्रति मैत्री, करुणा आदि मानवीय गुणों का विकास होने लगता है। वह सभी जीवों को अपने समान समझता है। किसी भी प्राणी का अहित उसे स्वीकार नहीं होता।[३]

समता जीव की प्रकृति है जब कि विषमता विकृति है। विकृति कभी भी उपादेय नहीं हो सकती है। यही कारण है कि महावीर ने सर्वदा मनुष्यों को विकृति से बचने का सन्देश दिया। वे व्यक्ति को शत्रुता के स्थान पर परम मित्रता, धृणा की जगह प्रेम आसक्ति की अपेक्षा अनासक्ति अपनाने को कहा करते थे। क्योंकि विश्व में व्याप्त विषमता को ऐसे ही सद्भाव पूर्ण व्यवहारों एवं विचारों से मिटाया जा सकता है। मनुष्य की यही वृति समता को रहित करने की क्षमता रखती है।

क्योंकि यह मनुष्य के मन में स्व एवं पर में राग-द्वेष से रहित होने का भाव, मान-अपमान दोनों ही अवस्थाओं में तटस्थता, त्रस-स्थावर सभी प्राणियों को समान समझना, राग - द्वेषादि के कारण आत्मा में विकार उत्पन्न न होने देना आदि सौम्य एवं विधेयात्मक भाव उत्पन्न करता है।[४] मनुष्य के ये शान्त एवं सौम्य भाव अत्यंत शक्तिशाली होते हैं और विश्व का कल्याण होता है। महावीर की देशना में सम्मिलित समता का यही प्रयोजन था, यही उसका निहितार्थ है।

सह अस्तित्व

अस्तित्व रक्षा प्राणी जगत की प्रकृति है। इसके लिए सभी प्राणी निरंतर प्रयत्नशील रहते हैं। अस्तित्व विविध रूपों में विभाजित रहता है। कभी जीवन अथवा प्राण रक्षा का अस्तित्व उठ खड़ा होता है तो कभी मान, अपमान, अहं आदि रुपों में अस्तित्व रक्षा की समस्या उत्पन्न हो जाती है। कभी व्यक्तित्व निर्माण के रूप में अस्तित्व का प्रश्न आ जाता है कभी स्वयं अस्तित्व के अस्तित्व बोध पर ही प्रश्नचिन्ह लगने की समस्या उत्पन्न हो जाती है। इन सबके पीछे परस्परता का चिंतन छिपा है जो सह अस्तित्व का ही दूसरा नाम है। हम अस्तित्व की बात करते हैं तो दूसरों के अस्तित्व को कैसे भूल सकते हैं। हमारा जीवन वनस्पतियों पर आश्रित है और अगर हम उनके अस्तित्व को समाप्त कर यह सोच ले कि हम स्वयं को बचा लेंगे तो यह हमारी सबसे बड़ी भूल होगी। हमें वनस्पति के अस्तित्व को मानना ही पड़ेगा।

"ज्ञानी पुरुष ही संयम साध सकता है"
M/S. PARK PLACE HOTEL
'SINGHI VILLA', 49/2, GARIAHAT ROAD
CALCUTTA - 700 019 • PHONE : 475-9991/92

महावीर ने अपनी धर्म देशना में इस बात का बार-बार उद्घोष किया है। परस्पर उपकार करना जीव का स्वभाव है।[५] यही अस्तित्व रक्षा है जो कुछ और नहीं, सह-अस्तित्व की स्वीकृति मात्र है।

सह-अस्तित्व की अवधारणा में अनाग्रह के बीज छिपे हैं। यह वैश्विक संघर्ष को समाप्त कर सकती है क्योकिं संघर्ष के मूल का जनक आग्रह-वृति है। आग्रहवृति अनेक प्रकार के मिथ्यात्व को जन्म देती है। व्यक्ति सत्-असत, एक-अनेक, परमार्थ-स्वार्थ आदि विविध प्रकार के द्वन्द्वों में उलझने लगता है, जब कि अनाग्रह की वृति मनुष्य के मन में सापेक्ष दृष्टि उत्पन्न करती है।

वह एक-अनेक, सत्-असत् के द्वन्द्वों से मुक्त होकर किसी भी तथ्य को सापेक्ष दृष्टि से परखता है और संघर्ष के मूलय कारणों का निराकरण करता है। वह अस्तित्व और नास्तित्व दोनों को विरोधी न मानकर सहभावी मानता है। किसी भी तथ्य को वास्तविकता प्रदान करने के लिए दोनों आवश्यक हैं ।[६] इसी प्रकार भगवान महावीर ने अपनी देशना में सह-अस्तित्व के द्वारा एक और अनेक के कारण उत्पन्न समस्याओं के निराकरण का मार्ग दिया है। वे कहते हैं जो एक है, वह अनेक भी है और जो अनेक है वह एकभी है। इसी तथ्य को वे स्पष्ट करते हुए कहते हैं जो एक को जान लेता है, वह सबको जान लेता है, और सबको जानने वाला एक को जान सकता है।[७] महावीर ने यह स्पष्ट करने का प्रयत्न किया है कि एक का भी अस्तित्व सत्य है और अनेक का भी अस्तित्व सत्य है। दोनों का ही सह-अस्तित्व है। सचमुच पारस्परिक विरोधी बातों की सहायता से समाधान का सूत्र प्रस्तुत करना एक विलक्षण कार्य है, जिसे महावीर ने सह-अस्तित्व की अवधारणा द्वारा सहज बनाया। सह-अस्तित्व महावीर की देशना का एक अद्भुत सिद्धान्त है जिसके निहितार्थ हैं सभी के अस्तित्व को स्वीकार कर विश्व शांति की स्थापना।

सहयात्रा

भवभ्रमण संसारस्थ प्राणियों की नियति है। जहाँ प्राणी विविध योनियों में जन्म लेते हैं और मरते रहते हे। वे अपन कमा क वश म रहकर ससाररूपा महासागर का महायात्रा करते रहते हैं। यहाँ प्रत्येक प्राणी एक यात्री भी है और सहयात्री भी।

जरा और मृत्यु के वेगवाले प्रवाह में बहते हुए प्राणियों के लिए ही एक द्वीप है, आधार है और उत्तम गति व शरण है।

यहाँ कभी कोई अकेले नहीं चलता है। जब भी वह अपनी यात्रा का प्रारंभ करता है कोई न कोई अवश्य उसका सहयात्री बन जाता है। यदि किसी कारणवश कोई अन्य प्राणी उसकी यात्रा-पथ का साथी नहीं बनता है तो स्वयं उसके अपने कर्म ही इस भूमिका का निर्वाह करने लगते हैं। ब्रह्माण्डरूपी महापंथागार में प्राणी का यही सच्चा सहयात्री है जो कभी भी उसका साथ नहीं छोड़ता। यही उसके सुख-दुःख, जन्म-मरण का जनक भी है और इससे त्राण दिलाने वाला भी। इसी रुप में इसकी प्रकृति का निर्धारण भी होता है। सहयात्री अगर अच्छा और अनुकूल हो तो कठिन यात्रा भी सुगम लगने लगती है जब कि प्रतिकूल सहयात्री सामान्य और आसान यात्रा को भी महाकष्टकारी बना देता है। यही कारण है कि महावीर ने अपनी देशना में मनुष्यों को ऐसे सहयात्री का चयन करने का परामर्श दिया है जो यात्रा-पथ में आनेवाली समस्याओं के निराकरण में उनका सम्यक् सहयोग करे।

आन्तरिक और बाह्य जगत् के रूप मे प्रत्येक प्राणी को दो भिन्न प्रकृति के पथ की यात्रा अपने जीवन काल में करनी पड़ती है। बाह्य-जगत् की यात्रा जहाँ भव-उत्पादक है वहीं अन्तर-जगत् की यात्रा भव-विनाशक। यात्रा के इस पथ में व्यक्ति को विभिन्न प्रकार के सहयात्री मिलते हैं। बाह्य-जगत् में अन्य प्राणियों का निवास रहता है और यही सहयात्री बनते हैं। जबकि आंतरिक जगत् की यात्रा में व्यक्ति की चेतना ही सहयात्री बनती है, क्योंकि यही इस पथ का पथिक है। यही व्यक्ति के मन में उत्पन्न होनेवाली विषय वासनाओं का नाश करती है और व्यक्ति अपने कर्मावरण को अल्प करते हए मुक्तिपथ की ओर अग्रसर हो जाता है। भगवान महावीर के कहने पर किरात ने अन्तर्यात्रा के पथ पर चलना प्रारंभ किया। उसने अपने भीतर प्रवेश किया। उसे सहयात्री के रूप में ऐसी दिव्य ज्योति का साथ मिला जिसके अ[illegible] उसन तमस् [illegible] सारे बंधनों को प्रज्वलित कर लिया।[6] उसने अपनी ग्रंथियों का भेदन कर लिया। वह सिद्धक्षेत्र की दिशा में प्रयाण कर लिया जहाँ से पुनः इस मर्त्यलोक में वापस आने की सारी संभावनाए समाप्त हो जाती हैं। सहयात्री की अवधारणा भगवान महावीर की देशना का एक महत्वपूर्ण अवदान है, जो मनुष्य के समक्ष आध्यात्मिक उन्नति के पथ में आने वाली बाधाओं एवं उनके निराकरण का मार्ग प्रस्तुत करती है।

"मनुष्य जीवन में ही सत्य कार्य करने का अवसर उपलब्ध होता हैं।"

Vinod Sepani

6/4/3, Seals Garden Lane,
Calcutta - 700 002

सहिष्णुता

सहिष्णुता मनुष्य का एक विशिष्ट गुण है जो उसकी विवेकशक्ति से युक्त होती है। यह मनुष्य के मन में ऐसी भावनाओं को जन्म देती है जिन पर आरूढ होकर व्यक्ति सभी प्रकार के द्वन्द्वों से मुक्त होने की क्षमता प्राप्त कर लेता है। इन्द्रिय-संयम को इसके लिए अनिवार्य माना जाता है और इसलिए व्यक्ति अपने को इन्द्रिय-विषय वासनाओं से मुक्त रखने का प्रयत्न करता है। वह जितेन्द्रिय बनकर निर्ममत्व भाव से जीवन जीता है। विभिन्न प्रकार की संवेदनाएँ उसे विचलित नहीं कर पाती हैं। सभी अवस्थाओं को सहन करने में उसे आनन्द का अनुभव होता है। वह पर-कल्याण के लिए सदैव तत्पर रहता है। इसके लिए उसके मनमें किसी प्रकार का प्रमाद या लोभ नहीं रहता है। विश्व का कल्याण करना उसका परम लक्ष्य रहता है। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए वह सभी कुछ सहन करने के लिए तत्पर रहता है और यही सहिष्णुता है। क्योंकि सहिष्णुता सहन करने का ही नाम है।

भगवान महावीर ने अपनी देशना में यह स्पष्ट किया है कि जगत का कल्याण सहिष्णुता के बिना संभव नहीं है। यह एक अनिवार्य सिद्धांत है और मानवता की रक्षा के लिए आवश्यक भी। यह मनुष्य को दूसरों के कष्टों को सहने की शक्ति प्रदान करता है। परहित के लिए यह अपेक्षित है। जैन परंपरा में सहिष्णुता की अवधारणा को स्पष्ट करने के लिए अनेकों उदाहरण प्रस्तुत किए गए हैं। स्वयं श्रमण महावीर का जीवन सहिष्णुता का जीवंत उदाहरण है। उन्होंने अपनी तपश्चर्या और संयम साधना में इसे अपनाया है। लाड़ देश में उपसर्गों का सहन इनकी अनुपम सहिष्णु प्रवृति का परिचय देता है।[९] कानों में कील ठोके जाने पर किसी तरह की प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं करना सचमुच सहिष्णुता की पराकाष्ठा है। महावीर ने अपने जीवन में सहिष्णुता को अपनाया और इसके महत्व को समझा। इसे मानव कल्याण का महामंत्र माना। इसीलिए उन्होंने इसे अपनी देशना में स्थान दिया और पूरे विश्व की भलाई का मार्ग प्रशस्त किया।

धर्म उत्कृष्ट मंगल है। वह अहिंसा, संयम और तप रूप है।
जिस साधक का मन सदा उक्त धर्म में रमण करता है,
उसे देवता भी नमस्कार करते हैं।

स्वतंत्रता

इस संसार में सभी को अपनी स्वतंत्रता अच्छी लगती है। कोई भी परतंत्र नहीं रहना चाहता। लेकिन प्रत्येक जीव दूसरों को परतंत्र बनाने का प्रयत्न करता रहता है। उसकी यह प्रवृत्ति विविध प्रकार के संघर्षों को उत्पन्न करती है। उसकी इस प्रवृत्ति का कारण उसके "नैसर्गिक स्वरूप का कर्मों के द्वारा आच्छादित होना" है। संसारी प्राणी चाहे अपने आपको स्वतंत्र रखने का लाख प्रयत्न कर ले, परंतु वह तो कर्माधीन है। कर्मों के अधीन होकर वह निरंतर दुःखों से पीड़ित होता रहता है। भगवान महावीर जीवों को कर्मों की इस परवशता से मुक्ति दिलाना चाहते थे, संसार की भयावहता से बचाना चाहते थे। अतः उन्होंने अपनी देशना में स्वतंत्रता को समाहित किया और मनुष्य को परतंत्रता की बेड़ी से मुक्त होने का मार्ग प्रदान किया। स्वतंत्रता के पथ में सबसे बड़ी बाधा मनुष्य का अहंकार और ममकार है। जबतक वह इनसे मुक्त नहीं होगा तब तक परतंत्रता के पाश को तोड़ नहीं पाएगा। इसकी प्राप्ति के लिए उसे अपना सर्वस्व त्याग करना पड़ेगा। सर्वस्व-त्याग के लिए मनुष्य को असीम संकल्प एवं धैर्य का आश्रय लेना पड़ेगा, जो उसके पास है और ममकार तथा अहंकार रूपी परिबंधनों से परिवेष्टित है।

भगवान महावीर ने परतंत्रता के दुःख को भोगा, साथ ही साथ स्वतंत्रता के सुख का रसास्वादन भी किया। इस स्वतंत्रता को पाने के लिए उन्होंने अपना सर्वस्व त्याग दिया। उन्होंने न केवल अपने घर, परिवार, बंधू-बांधव को ही छोड़ा, बल्कि अपने धर्म-सम्प्रदाय का भी विसर्जन किया। भगवान पार्श्वनाथ का धर्म-सम्प्रदाय उन्हें परम्परा से प्राप्त था, फिर भी वे उसमें दीक्षित नहीं हुए। उन्होंने दीक्षा ग्रहण की, लेकिन वह भी अलौकिक थी। दीक्षित होते ही उन्होंने संकल्प किया-मेरी स्वतंत्रता में बाधा डालने वाली जो भी परिस्थितियाँ उत्पन्न होंगी, मैं उनका साहसपूर्वक सामना करूंगा, उनके सामने कभी नहीं झुकूंगा। मुझे अपने शरीर का विसर्जन मान्य है, पर परतंत्रता का वरण कभी भी स्वीकार नहीं होगा।[१०] महावीर ने अपने इस संकल्प का पालन जीवन पर्यंत किया। परिषहों का सामना किया। निर्ममत्व होकर जीवन बिताया। समस्त परिग्रहों का त्याग किया। परतंत्रता को कभी भी स्वीकार नहीं किया। सचमुच, अद्‌भुत थी उनकी संकल्प साधना और परतंत्रता के त्याग की भावना।

"क्षमा से क्रोध को जीते।"
In the memory of Late Narendra Singhji Boyd
83/B, Vivekananda Road, Calcutta - 700 006,
Meera Boyd Phone : 241-0719

संकल्प की भावना मनुष्य के मन में उठने वाले विभिन्न प्रकार के द्वंद्वों को समाप्त करती है व्यक्ति उसके कारण निर्णय लेने की अवस्था में आ जाता है। द्वंद्वों की आँधी उसे अपने स्थान से विचलित नहीं कर पाती है। अहंकार और ममकार के विविध रूप उसके पथ में बाधाएँ उत्पन्न करते अवश्य हैं, लेकिन वह इनसे घबराता नहीं है। इन सबका सामना वह धीरज के साथ करता है और अंततः उन्हें पराजित कर विजयश्री को प्राप्त कर लेता है. वह परतंत्रता की शक्तिशाली बेड़ियों को तोड़ देता है। उसका सम्पूर्ण जीवन स्वतंत्रता के प्रकाश से आलोकित हो जाता है। वह अपने जीवन में आए हुए स्वतंत्रता के इस आलोक से परतंत्रता रूपी घोर अंधकार को सर्वदा के लिए दूर कर देता है। प्रकाश के इस पुंज में विश्व के समस्त ऐश्वर्य कांतिहीन लगने लगते हैं। वह इन्हें त्यागने में किसी प्रकार का प्रमाद नहीं करता। उसके समक्ष त्याग और स्वतंत्रता की महानता स्पष्ट हो जाती है। वह इन्हें अपने जीवन में स्थान देकर अनुपम सुख का उपभोग करता है।

महावीर ने अपनी देशना में स्वतंत्रता को स्थान देकर मनुष्य के समस्त त्याग और संकल्प का अनूठा उदाहरण प्रस्तुत किया। उनकी इस अवधारणा में जहाँ एक ओर त्याग की महानता का दिग्दर्शन होता है वहीं दूसरी तरफ संकल्प - साधना की महत्ता भी स्पष्ट परिलक्षित होती है। परंतु महावीर की स्वतंत्रता की इस उद्घोषणा का यह अर्थ कदापि नहीं लगाया जा सकता है - सभी व्यक्ति अपने घर-परिवार को त्याग कर संन्यस्त जीवन बिताने का संकल्प ले लें। उन्होंने मात्र उन लोगों के लिए ही इसका प्रतिपादन किया, जो सब सीमाओं से मुक्त स्वतंत्रता को अनुभव करना चाहते हैं।

महावीर की देशना में विश्व कल्याण के विविध तथ्य छिपे हैं, जिनमें से कुछ अवधारणाओं के आधार पर इनके विश्वव्यापी स्वरूप पर प्रकाश डालने का प्रयास मात्र किया गया है।

धर्म मेरा जलाशय है, ब्रह्मचर्य शान्ति तीर्थ है,
और कलुषभाव रहित आत्मा प्रसन्न लेश्या है, जो मेरा निर्मल घाट है,
जहाँ पर आत्मा स्नान कर कर्म रज से मुक्त होती है।

सन्दर्भ :-

१. समियाए धम्मे आरिएहिं पवेइए। आचारंग, १/८/३

२. सत्तु-मित्त-मणि-पहाण-सुवण्ण-मट्टियासु राग-देसा भावो समदा णाम।

३. सण्वे पाणा ण हंतब्वा। आयारो, ४/१

४. जं च समो अप्पाणं परं य मइय सव्वमहिलासु।
अप्पियपियमाणदिसु तो समणो सो य सामाइयं।।मूलाराधना, [५२१]

५. परस्परोपग्रहो जीवानाम्। तत्वार्थसूत्र, ५/२१

६. अंगसुत्ताणि भाग 2 भगवई, १/१३३-१३८

७. जे एगं जाणइ. से सव्वं जाणइ, जे सव्वं जाणइ से एगं जाणई।आयारो ३/७४

८. आवश्यकचूर्णी, उत्तर भाग, पृ० २०३-२०४

९. मंसाणि छिन्नपुव्वाइं। आयारो, ९/३/११

हयपुव्वो तत्थ दंडेण, अदुवा मुट्ठिणा अदु, कुंताइ फलेण।

अदु लेलुणा कवालेणं हंता हंता बहवे कंदिसु। वही, ९/३/१०,

वही९/३/३-६,९/३/११,९/३/१२-१३

१०. बारस वासाइं वोसट्ठकाए चत्तदेहे जे केइ उवसग्गा उपज्जंति।

-आयारचूला, १५/३४ (अंगसुताणि,I)

"सच्ची वीरता स्वयं को जीतने में है।"
M/s. Arihant Electric Co.
MANUFACTURER OF ELECTRIC CABLES
21, Rabindra Sarani, Calcutta - 700 007, Phone : 25 5668

भगवान् महावीर का जन्म स्थान

श्री भंवरलाल नाहटा

भगवान महावीर अपनी भव-भव की साधना से विश्व के सर्वोच्च आत्म विज्ञानी तीर्थंकरों में अन्तिम तीर्थंकर हुए। उन्होंने कठिन तपश्चर्या की । असह्य मरणान्त उपसर्ग और परिषह सहन कर आत्मा को कर्म फल से क्षय कर विशुद्ध आत्म स्थिति प्राप्त कर अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन और अनन्त चरित्र का निर्मल स्वरुप प्रकट कर सच्चे अर्थों में परमात्मा परम ऐश्वर्यशाली बने। हमारे जैसी ही चर्तुगति में भ्रमण करने वाली उनकी आत्मा थी किन्तु संसार में उत्पन्न होने वाले अष्टकर्मों को खपा कर उस सिद्धि स्थान को प्राप्त किया जो पुनः संसार में आने के राग द्वेष आदि कारणों को नष्ट कर उससे रहित हो गये।

तथाकथित परमात्मा ब्रह्मा, विष्णु, महेश, वस्तुतः उत्पाद, व्यय और ध्रोव्य त्रिपदी का ही रूपक है। सृष्टिकर्ता स्वयं आत्मा ही अनादि काल से अपने-अपने कर्मों के अनुसार भव भ्रमण रूप सृष्टि का कर्ता है। उसे भले ही आत्मा ही परमात्मा मान्यकर सार्वभौम समाधान करे। भगवान महावीर आत्मशुद्धि क्रम से तीर्थंकर नाम कर्म उपार्जन करने से महावीर बने । सम्यक्त्व प्राप्ति करने के बाद ही भवों की गणना होती है। जो अनादि काल से अनन्त भवों को समाप्त कर २७ भव मुख्यतः कहलाये। अन्तिम भव स्वर्ग से च्यव कर अवधिज्ञान सहित इसी भरत क्षेत्र के क्षत्रियकुण्ड में महाराज सिद्धार्थ और माता त्रिशला की कोख में वर्धमान महावीर ने जन्म ग्रहण किया और त्रिजगत पूज्य बने।

भगवान का जन्म स्थान मगध देश का क्षत्रियकुण्डपुर नगर जो क्षत्रियकुण्ड और ब्राह्मण कुण्ड दो भागों में विभक्त था। जहाँ मील आधा मील की दूरी पर सिद्धार्थ राजा के महल के अवशिष्ट खण्डहर रूप में विद्यमान है और जन्म स्थान नाम से आज भी वहां की जनता के द्वारा अभिहित है वहाँ आज भी भगवान महावीर की गुप्त कालीन लगभग १५०० ई० वर्ष पुरानी मनोज्ञ प्रतिमा पूज्यनीय है। स्थान-स्थान से यात्री सघों के आने का इतिहास आज भी ८००-९०० वर्षों का विवरण सहित उपलब्ध है।

बिना औषध भी मात्र कुपथ्य का त्याग करने से व्याधि दूर हो सकती है परन्तु कुपथ्यको त्याग किये बिना सैंकड़ो औषधियों का सेवन करने पर भी रोग की शान्ति नहीं होती।

यह इतिहास श्वेताम्बर मान्यतानुसार प्रमाणित है और आस-पास के गाँवं तथा प्रभु के विहारों-स्थलों के, प्रतिमाएँ, मंदिरों आदि से समर्थित हैं। ५-७ वर्ष पूर्व सम्मेद शिखर जी में एक गोष्ठी का आयोजन हुआ जो अचलगच्छाधीश श्री गुणसागर सूरि जी और मुनि कलाप्रभ सागर जी के सानिध्य में सम्पन्न हुई। जिसमें सर्वसम्मति से कुण्डलपुर को जन्म स्थान मान्य किया गया।

अंग्रेजी पाश्चात्य विद्वानों ने जब शोधकार्य आरम्भ किया तो उन्होंने भगवान महावीर के ननिहाल वैशाली को ही जन्म स्थान की कल्पना की। डा० हर्मन जैकोबी ने महावीर की जन्म भूमि बौद्धों के महावग्ग सूत्रानुसार कोटिग्राम की कुण्डग्राम के रूप में कल्पना कर ली। वैशाली भगवान महावीर का ननिहाल था। किन्तु जन्मस्थान तो क्षत्रियकुण्ड ही था। डा० होर्नेल ने कोल्लाक को क्षत्रियकुण्डमान लिया जो वैशाली के निकट है। मुनि कल्याणविजय जी ने वैशाली के एक विभाग को क्षत्रियकुण्ड बतलाया।

वस्तुतः किसी भी जैन या बौद्ध ग्रन्थ में वैशाली का उपनगर क्षत्रियकुंड या ब्राह्मण कुण्ड नहीं बतलाया है। नाम साम्य भी नहीं और निराधार है। कल्पसूत्रादि जैनागमों के अनुसार क्षत्रियकुण्ड एक बड़ा नगर था। वहाँ पर जामालि और भगवान की पुत्री प्रियदर्शना ने ५०० पुरुष और १००० स्त्रियों के साथ भगवान से दीक्षा ली थी जो कि वहाँ बड़ी बस्ती होने का संकेत देती है।

कल्पसूत्र में सिद्धार्थ राजा के नगर क्षत्रियकुण्ड के वर्णन में अनेक गणनायक, दण्डनायक, राजेश्वर, माण्डलिक, कौटुम्बिक, मंत्री, महामंत्री, गणक, द्वारपाल, अमात्य, पीठमर्दक, कंगरःक, सेठ, सेनापति, नगरनिगम, अर्थवार, दूत, कान्धिध्वज आदि से सिद्धार्थ राजा परिवेष्टित थे। भगवान के नामकरण प्रसंग में धन धान्य वृद्धि के साथ सामन्त राजाओं के भी वशवर्ती होने का उल्लेख है।

वैशाली के समर्थक श्री विजयेन्द्र सूरीजी ने भी तीर्थंकर महावीर ग्रन्थ के पृष्ठ ८५ में लिखा है कि यह कुण्डपुर वैशाली का उपनगर नहीं था बल्कि स्वतंत्र नगर था। आगे लिखा है पृष्ठ ८७ में, वैशाली और कुण्डग्राम की दूरी १$^{३}/_{५}$ मील है। पर यह कैसे सम्भव है। वैशाली बड़ा नगर था जहाँ ७७०७ राजाओं की गणतंत्र परिषद होने का बौद्ध शास्त्रों में वर्णन है। डा० हारनेज ने लिखा है कि वैशाली के तीन विभाग

"सत्य की खोज ही सत्य के जन्म की प्रक्रिया है।"
KUSUM CHANACHUR
Prop. Churoria Brothers
MANUFACTURE BY : K. E. C. FOOD PRODUCT
P.O. Azimgunj, Dist : Murshidabad, ✆: S. T. D. 03483 - 53234 Cal - 230-0432/231-2802

थे जिसमे स्वर्ण कलश वाले ७००० घर पहले में , दूसरे में रजत कलश वाले १४००० घर थे और अन्तिम ताम्र कलश वाले २१,००० घर थे तो इससे ये सिद्ध होता है कि वैशाली का विस्तार कई मीलों में होगा। वैशाली से सवा मील दूर में स्वतंत्र क्षत्रिय कुण्ड राज्य हो यह कैसे संभव हो सकता है। अतः भगवान का नाम वैशालिक के कारण जन्म स्थल वैशाली मानना त्रूटि है।

भगवान के विदेह दिन्ता, वैशालिक आदि विशेषणों से विदेह की वैशाली को भगवान की जन्म भूमि मानना सही नहीं। ये विशेषण ननिहाल मातृपक्ष के सूचक हैं। क्योंकि त्रिशला को ही विदेहदत्ता कहा गया है। भगवान के लिए ज्ञात, ज्ञातपुत्र, ज्ञात निवृत्त आदि विशेषण पितृपक्ष के सूचक हैं।

वैशाली नरेश चेटक उच्चकुलीन थे तथा त्रिशला उनकी बहिन थी यह गौरव की बात है। राजगृही के राजा श्रेणिक की रानी चेलना को विदेह कन्या कहा गया है। कोणिक आजातशत्रु को वैदेही तथा गुप्त वंश चंद्रगुप्त की पत्नी कुमारदेवी को लिच्छवी कन्या तथा समुद्रगुप्त को लिच्छवी दोहित्र कहते हैं जो मातृ पक्ष के गौरव का सूचक है। वैशाली शब्द का प्रयोग त्रिशला माता के लिए है। आगमानुसार क्षत्रिय कुंड के पास माहण कुण्ड था जो अभी भी माहणगाँव है। भगवान दीक्षा ले कार्मारक पधारे। दो उपवास का पारणा बहु ब्राह्मण के यहाँ किया फिर मोराक सन्निवेश पधारे। आवश्यक निर्युक्ति में कुमार गांव पधारने का उल्लेख है। कुमारगांव आज भी क्षत्रियकुण्ड के पास लछवाड़ से तीन मील दूर पर है। ८ मील दूरी पर कोनाग गांव कोन्नाग का अपभ्रंश है। इन गावों में जैन मन्दिर थे जिनका उल्लेख तीर्थ मालाओं में पाया जाता है। विगत ८०० वर्षों में तीर्थ यात्री संघों के क्षत्रियकुंड जाने के अनेक प्रमाण उपलब्ध है जिनसे यह सिद्ध होता है कि भगवान महावीर का जन्म स्थान निश्चित रुप से क्षत्रिण कुंड ही है वैशाली नहीं।

जब तक वृद्धावस्था नहीं आती, जब तक व्याधियों का जोर नहीं बढ़ता,
जब तक इन्द्रियाँ क्षीण नहीं होतीं, तब तक विवेकी आत्मा को
जो भी धर्म का आचरण करना है वह कर लेना चाहिए।

वैष्णव जन तो तैने कहिये

डा० भानीराम

जं जं इच्छसि अप्पणतो
तं तं इच्छ परस्सवि
एत्तियगं जिणा सासणं

"जैसा तुम अपने लिए चाहते हो, वैसा दूसरे के लिए चाहो. यही जिन का शासन है।" इन शब्दों में वर्द्धमान महावीर ने धर्म का सार प्रस्तुत किया है। यह धर्म महावीर या बुद्ध, कृष्ण या खीस्त का नहीं मात्र 'धर्म' है- निर्विशेष, अनुल्लंघनीय। यही असंख्य तीर्थंकरों की प्रवेदना है, अवतारों का संदेश है, संतो की वाणी है, अर्हतो का प्रवचन है, जीवन के रथ चक्र की धुरा है।

इस युग की सबसे बड़ी विभीषिका संवेदना का निरन्तर विघटन है और संवेदना के बिना धर्म अकल्पनीय हैं। मंदिर, पूजा, छापा, तिलक, जप माला, यज्ञ, तप, अनुष्ठान बढ़ते जा रहे हैं, लेकिन दूसरों के लिए अपने जैसी संवेदना जिसे भगवान महावीर ने आत्मतुला (आय तुले पया-आत्म तुला पर प्रजा-शेष सृष्टि को तोलना) का औद्योगीकरण और यांत्रिकी करण के इस युग में अनवरत हुआ है। इसका परिणाम मानसिक शारीरिक रोगों के रुप में हम सब लोग भोग रहे हैं। मंतव्य इन शब्दों में स्पष्ट है।

महावीर की प्रवेदना केवल पारमार्थिक धर्म का उपदेश नहीं है बल्कि मंदिर से बाजार तक, घर से दफ्तर तक, धर्मस्थल से वाणिज्य-व्यापार स्थली तक हमारे वैयक्तिक और पारिवारिक सामाजिक जीवन में सफलता का अमोघ सूत्र है। विश्व प्रख्यात मनोवैज्ञानिक एडलर कहते हैं-"जो व्यक्ति दूसरे व्यक्तियों में रुचि नहीं रखता, मात्र अपने तक सीमित है वही समाज का सबसे बड़ा खतरा है तथा अपने जीवन की असफलता और विपत्तियों का कारण है।"

आज हजारों व्यक्ति मानसिक रोगों से पीड़ित हैं। वे दूसरों से संवेदना और सहायता की आकांक्षा रखते हैं, लेकिन दूसरों की इच्छाओं आवश्यकताओं तथा भावनाओं

"धर्म की धूरी को खींचने के लिए धन की आवश्यकता नहीं है।"
M/s. Graphite India Limited
PIONEERS IN CARBON/GRAPHITE INDUSTRY
31, Chowrangee Road, Calcutta - 700 016 ✆ 226 4943, 29 2194, Fax : (033) 245 7390

के प्रति संवेदनशील नहीं है, यही उनके मनो-स्नायविक रोगों का कारण है तथा महावीर का संवेदना सूत्र ही उनके लिए एकमात्र उपचार है। मनोचिकित्सकों की दवाओं से वे अपने को भ्रमित कर सकते हैं, लेकिन स्वयं मनोचिकित्सक यह जानते हैं कि औषधि भौतिक रासायनिक पदार्थों में नहीं उनके हृदय में है जो उन्हे शाखत आरोग्य प्रदान कर सकता है।

व्यवसाय तथा विज्ञापनों के क्षेत्र में यह बात सर्वमान्य है कि जो व्यक्ति या संस्थान दूसरे क्या चाहते हैं उसे आलोकित कर सकता है, उसकी पूर्ति को ध्यान में रखकर अपने को प्रस्तुत कर सकता है, वही विज्ञापन या व्यापार में सफल हो सकता है। इसे ही वाणिज्य जगत में, मांग और पूर्ति, का सिद्धान्त कहा गया है। अगर यह झूठ और छल पर टिका है तो उसके बल पर कोई व्यवसाय कुछ समय तक तो खड़ा रह सकता है, अंततः गिरता ही है। कोई कम्पनी विज्ञापन में यह नहीं दिखाती कि वह क्या चाहती है, बल्कि वही प्रदर्शित करती है जो आप उससे चाहते हैं और वह आपकी चाहत, अपेक्षा या आवश्यकता को अपनी वस्तु से कैसे पूरी कर सकता है। बहुधा ये विज्ञापन झूठे और बढ़-चढ़ कर किये छलावा पूर्ण दावे हैं, जो वास्तविकता की चट्टानों पर टूट कर बिखर जाते हैं और उनका स्थान वैसे ही अन्य विज्ञापन ले लेते हैं जिनकी नियति भी वही है। लेकिन वास्तव में यदि कोई व्यक्ति या संस्थान दूसरों की मांग को अपने दावे के अनुसार पूर्ति कर पाता है तो उसे विज्ञापन की अपेक्षा हीं नही रहती।

विश्व-प्रख्यात मनोचिकित्सक आल्फ्रेड एडलर ने एक आश्चर्य जनक घोषणा की थी- चौदह दिनों में बिना दवा के अवसाद रोग (डिप्रेसन) का उपचार। उसका प्रस्ताव यह है कि यदि कोई व्यक्ति प्रतिदिन एक ऐसा काम करता है जो दूसरे किसी व्यक्ति के मुख पर संतुष्टि की मुस्कान ला सके तो वह चौदह दिनों में अवसाद रोग से मुक्त हो जायेगा। यह उसने अपने चिकित्साधीन असंख्य रोगियों पर प्रयोग कर देखा है। वह कहता है कि सारे मनोरोगों का मूल कारण ही व्यक्ति की दूसरों के प्रति उपेक्षा, क्रोध, घृणा और स्वार्थ परक अरुचि है। उसके मिटते ही व्यक्ति समग्र मानवता से एक होकर अपने भीतर उस अध्यात्म-अमृत को प्राप्त कर लेता हैं। जो समस्त

सत्य निष्ठ साधक सब ओर दुःखों से घिरा रहकर भी घबराता नहीं है और न विचलित होता है।

मनोरागों की अव्यर्थ औषधि है। अपने अतीत से क्रोध, अपने भविष्य से भय, स्व- केन्द्रित स्वार्थ-गलित रुग्ण चेतना का परिचायक है और वही हमारे मन के उस खालीपन का कारण है जिससे हम मानसिक रोगी बनते हैं और तत्परिणाम स्वरूप पेट के घाव (अल्सर) हृदय रोग, उच्च रक्तचाप से पीड़ित होते हैं। जो अपने को शेष संसार से काट कर अलग कर लेता है वह संसार के द्वारा भी अकेला छोड़ दिया जाता है और उसके जीवन में आत्म -तुष्टिदायक कोई सत्व नही रहता। यही इस शताब्दी में मानवीय चेतना की सबसे बड़ी संक्रांति है।

इस युग मे एक अद्‌भुत व्यक्ति हुआ है। उसका नाम था डॉ० अल्बर्ट स्वाइत्जर। वह विश्वमानवता का सेवक था। मतवादों और लोकशंसा से उसे अरुचि थी । अफ्रीका महाद्वीप के किसी जगंल में एक छोटी सी झोपडी बना कर उसने लाखों कुष्ट रोगियों का उपचार किया और बिना किसी घोषणा या ग्रंथरचना, आन्दोलन या मतवाद स्थापना के मर गया । उसकी दैनन्दिनी के पृष्ठों को संचयित कर एक पुस्तिका अनेक वर्षों के बाद निकली जिसका शीर्षक 'जीवन का सम्मान। उसके प्रथम परिच्छेद की प्रथम पंक्ति यह है - मैं जीवन हूँ, जी रहा हूँ और जीना चाहता हूँ। मेरे चारों ओर भी जीवन है जो जी रहा है और जीना चाहता है। अगर मेरे जीने से मेरे चारों ओर फैले महा-जीवन की संवर्धना हाती है तो मै जो करता हूँ वह धर्म है और अगर मेरा जीवन मेरे पर्यावरण में व्याप्त जीवन का अवरोधक , साधक शत्रु और हिंसक है तो मैं जो कुछ भी करता हूँ वह मेरी दृष्टि में पाप है। इस एक वाक्य को पढ़ने के बाद पूरी पुस्तक को पढ़ने की अपेक्षा ही नही क्योंकि सार्वत्रिक सार्वभौम धर्म की इससे अधिक स्पष्ट व्याख्या कहीं मिलती ही नहीं। स्वयं भगवान महावीर ने धर्म की यही स्पष्ट प्रवेदना आचरांग सूत्र में की है। जो अध्यात्म को सारभूत सत्य है। भगवान का मंतव्य इन शब्दों में स्पष्ट है।

"सर्व प्राण, भूत, जीव, सत्व-

-का हनन न करना

-को बलात आज्ञानुवर्ती न करना

-को परितप्त न करना

"यह समस्त पृथ्वी भी लोभी पुरुष को तृप्त करने में असमर्थ हैं।"

VIJAY KUMAR BHANDAWAT
20/1, Maharshi Devendra Road, 5th Floor, Calcutta - 700 007
Phone : 239-6823, 250623

- को संतप्त न करना

- को उद्वैलित न करना

- यही धर्म

- ध्रूव नित्य और शाश्वत- शुद्ध है

- क्षेत्रज्ञ (आत्मज्ञ) अर्हतों द्वारा प्रवेदित।

भगवान ने कहा, यह आर्यों द्वारा प्रवेदित धर्म है और इसके विपरीत प्रवेदना और आचरण जीवन और कर्म 'अनार्य' है। महावीर ने पाप के अठारह स्थानों में हिंसा को प्रथम तथा धर्म के अठारह स्थानों में अहिंसा को प्रथम स्थान दिया है। लेकिन अहिंसा और हिंसा की उनकी व्याख्या उपरोक्त प्रवेदना के प्रकाश में जीवन हनन तक सीमित नही हैं अपितु अपने चारों ओर व्याप्त जीव पर्यावरण को अल्पतः उद्वैलित करने तक को परिव्याप्त करता है। अपने जीवन से अपने चारों ओर व्याप्त पर्यावरण को जरा भी क्षति-ग्रस्त या पीड़ित करने को, उसके प्रति असंवेदित व्यवहार को, उसकी पीड़ा की उपेक्षा कर जीने मात्र को भयानक हिंसा मानती है और विज्ञान इसका समर्थन करता है। अर्हतों और संतों की जीवन गाथाएँ इसे संपुष्ट करती हैं और संसार के सारे धर्म-सम्प्रदाय इसका समर्थन करते हैं। महावीर के मंतव्य में संवेदना का अभाव ही हिंसा का जनक है और संवेदना का आविर्भाव ही धर्म की और बढ़ता प्रथम और अंतिम चरण है जो जीवन को आमूल- चूल परिवर्तित करने वाला है, जीवन की सम्पूर्ण क्रांति है।

"वैष्णव जन तो तैने कहिए, जे पीर पराई जाने रे" इन पंक्तियों में गुजरात के संत नरसिंह मेहता ने मानव धर्म का वही सार- सत्य प्रकट किया है जिसे गणाधिपति आचार्यों के आचार्य श्री तुलसी "जैन धर्म" कहते हैं। मैंने उनके एक प्रवचन में सुना है कि संसार को जैन नहीं, मैन (आदमी) सच्चा आदमी चाहिए और जो मैन (आदमी) हो गया वह स्वयंमेव जैन हो गया चाहे वह किसी भी संप्रदाय का आवरण हो या संप्रदाय मात्र से असंप्रक्त हो और जो मैन नही है वह 'जैन' हो ही नहीं सकता।

इसके उदाहरण ब्रिटेन के प्रख्यात दार्शनिक बट्रैंड़ रसेल हैं जो किसी धर्म या संप्रदाय से संबद्ध नहीं थे और जिन्होंने अपने को नास्तिक घोषित किया था लेकिन मानव-

---

शस्त्र हिंसा एक से एक बढ़कर है।

किन्तु अशस्त्र अहिंसा से बढ़कर कोई शस्त्र नहीं।

सारांश कि अहिंसा से बढ़कर कोई साधना नहीं है।

मानव की तृष्णा मेरु पर्वत समान है। मन की शुद्ध भावना से इन्सान अपने कर्म क्षय कर सकता है

महावीर जयन्ती के शुभ अवसर पर हार्दिक शुभ कामनाएँ

★
★ ★
★ ★ ★

G.C. Jain
A-40 N.D.S.E - II
New Delhi - 110049
Tel - 6445095/24011

WB/NC - 330
Vol XXI No. 1

'Titth ayara'

Registered with the registered
of Newspapers for India under
No. R.N. 3018/77

April 1997

जिसने दुःख को समाप्त कर दिया है उसे मोह नही है, जिसने मोह को मिटा दिया है उसे तृष्णा नहीं है। जिसने तृष्णा का नाश कर दिया है उसके पास कुछभी परिग्रह नहीं है, वह अकिंचन है।

महावीर जयन्ती के शुभ अवसर पर उनका संदेश जन-जन तक पहुँचे इस शुभ कामना के साथ –

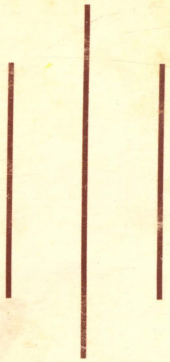

Kamal Singh Rampuria
Rampuria Mansions
17/3, Mukhram Kanoria Road, Howrah
Phone No. : 666-7212/7225

द्वारा मानव के दमन के विरूद्ध जीवन भर लड़ते रहे ओर परमाणु-शस्त्रों के निर्माण और युद्ध के विरोध में विश्वव्यापी आंदोलन के शिरोमणि थे। अपने ग्रंथों में उन्होंने 'धर्म' शब्द को त्याज्य माना है, किन्तु अपने जीवन में वे एक सत्यवादी संवेदनशील, विश्व चेत्ता, लोकहितकारी व्यक्ति रहे हैं। अगर यह धर्म नहीं है तो धर्म और क्या होगा स्वयं नरसिंह मेहता जैन नहीं थे। वे वैष्णव आम्नय के भक्ति-मार्ग के अनुयायी थे लेकिन उनका जीवन कीर्तन और पूजा में नहीं, अपितु अधों और विकलांग लोगों की दिन- रात सेवा में बीता और इस पुरुष यज्ञ में उन्होंने अपनी छप्पन करोड़ की संपति होम कर दी और अंततः अंधे भिखारियों के बीच स्वयं भी भिखारी बन बैठे। महावीर के मंतव्य में उनसे बेहतर कोई जैन, गणाधिपति तुलसी के शब्दों मे उनसे बढ़कर कोई मैन (आदमी) नहीं हो सकता।

'जो पीर पराई जाने रे', यही धर्म का सार सत्व है। यही हमारी प्रवचन -माता है। यही जैन धर्म का जैनत्व है, यही मानव की मानवता का शीर्ष- कलश है।

मुच्चई सो ससंवेगी

अमुच्चिणो होई असंवेगी।

"संवेदेनाशील ही मुक्त हो सकता है, अंसवेदनशील नहीं" इस मंतब्य में भगवान महावीर ने विश्व- मानवता के समक्ष धर्म का महामार्ग खोला है जिस पर चलने में ही अणु-शस्त्रों के अंबार से आतंकित मानवता का अंतिम त्राण है, उसकी शरण है,उसकी प्रतिष्ठा है।

"क्रोध में मनुष्य नीचे गिरता है।"
Smt. Kusum Kumari Doogar
166, JODHPUR PARK, CALCUTTA - 700 068 • Phone : 472 0610

भगवान महावीर का बोधि-स्थान

लेखक - श्रीनवीनचन्द्र शास्त्री

कैवल्य प्राप्ति का स्थान और समय

भगवान महावीर को केवलज्ञान की प्राप्ति वैशाख शुक्ला दशमी को मघा नक्षत्र के विजय मुहूर्त्त में षष्ठोपवास के अनन्तर ऋजुकूला या ऋजुपालिका नदी के वामतट पर जम्भक नामक गांव के निकट शाल वृक्ष के नीचे हुई थी। यह स्थान सामग नामक किसान का खेत था । और इसके उत्तर-पूर्व की ओर एक मन्दिर था । तिलोय पण्णति में बताया गया है –

बइसाह सुद्ध दहमी माघारि सवम्मि वीरणाहस्स।
रिजूकूल नदी तीरे अवरण्हे केवलं णाणं ।। अ०४ गा ०७०१

अतः यह निश्चित है कि दिगम्बर और श्वेताम्बर दोनों सम्प्रदाय के आगम ग्रंथों के अनुसार भगवान महावीर को केवलज्ञान की प्राप्ति ऋजुकूला नदी के किनारे जम्भिक या जम्भक गांव के किसी खेत में शालवृक्ष के नीचे हुई थी । इस जम्भक या जम्भिक गांव के सम्बन्ध में विद्वानों में अनेक मतभेद है

विभिन्न मान्यताएँ

श्री बाबूकामता प्रसाद जी ने झरिया को जम्भक गाँव माना है । आपका कहना है कि प्राचीन लाट देश का विजयभूमि प्रान्त वर्तमान बिहार के अन्तर्गत छोटा नागपुर डिवीजन के मानभूमि और सिंहभूमि में है। स्व० नन्दलाल डे ने भी झरिया को ही जम्भक गांव माना है। यहाँ की बराकर नदी ही प्राचीन ऋजुकूला है। सि कथन में एक ही बात विचारणीय है, वह है भगवान की केवल ज्ञान प्राप्ति का बज्रभूमि में होना। वर्तमान झरिया में कोयला निकालते समय यहां की पृथ्वी से प्रथम बार पत्थर निकलता है, अतः यह भूमि यथार्थ वज्रभूमि है। आगम साहित्य में भौगोलिक निर्देशानुसार इस गांव को वज्रभूमि में होना चाहिए।अतः इस स्थान पर भी ऊहापोह होना आवश्यक है।

असत्य वचन बोलने से बदनामी होती है, परस्पर वैर बढ़ता है,
और मन में संक्लेश की वृद्धि होती है।

श्वेताम्बर आगम साहित्य में जम्भिक गांव की स्थिति लाट देश में मानी गई है। श्री मुनि कल्याण विजयजी इस गांव की स्थिति का निर्णय करते हुए लिखते हैं कि जम्भिक गांव की स्थिति पर विद्वानों का मतैक्य नहीं है। कवि परम्परा के अनुसार सम्मेदशिखर से बारह कोस पर दामोदर नदी के पास जो जंभी गांव है, वह प्राचीन जम्भिक गाँव है। कोई सम्मेदशिखर के दक्षिण पूर्व में लगभग ५० मील पर आसी नदी के पास वाले जम गांव को प्राचीन जम्भक गांव बताते हैं। हमारी मान्यतानुसार जम्भिक गांव की स्थिति इन दोनों स्थानों से भिन्न स्थान मे होनी चाहिए। क्योकि भगवान के विहार वर्णन से अवगत होता है कि जम्भिक गांव चम्पा के निकट ही कहीं होना चाहिए।

डा० स्टीन ने पंजाब प्रान्त के रावलपिण्डी जिले में कोटरा नामक ग्राम के निकट "मूर्ति" नामक पहाड़ी या प्राचीन जीर्ण मन्दिर को देखकर लिखा है कि भगवान् महावीर ने यहीं पर केवलज्ञान प्राप्त किया था।

मौलिक विरोध

श्री बाबू कामताप्रसाद द्वारा अनुमानित स्थान झरिया प्राचीन जम्भिक या जुम्भक ग्राम नहीं है। इस स्थान को ऋजुकूला नदी के किनारे होना चाहिए। बराकर नदी ऋजुकूला का अपभ्रंश नहीं हो सकती; और न झरिया में कोई भी ऐसा प्राचीन चिन्ह ही उपलब्ध है, जिससे इसे भगवान् का केवल ज्ञान स्थान माना जा सके। श्री बाबू कामताप्रसाद को भी इस स्थान के विषय में सन्देह है। उनका यह केवल अनुमान मात्र है।

श्री मुनि कल्याण विजय जी को तो स्वयं ही इस स्थान की अवस्थिति के विषय में सन्देह है। पर इतना उन्हें निश्चय है कि यह चम्पा के आस-पास कहीं है।

डा० स्टीन की मान्यता तो बिल्कुल ही निराधार है। कारण कि भगवान् को केवलज्ञान मगध के अन्तर्गत हुआ था। उनको बोध की प्राप्ति नदी के किनारे हुई थी; पर्वत के ऊपर नहीं। अतः उक्त मत बिल्कुल भ्रामक है।

"व्यक्तित्व के विकास के लिए सत्पथ गामी बनना जरुरी है।"
M/s. Royal Touch Overseas Corporation
47, PANDIT PURUSHOTTAM ROY STREET, 2nd FLR., CALCUTTA - 700 007 INDIA
PHONE : 91-33-230 1329, 232 1033 • FAX : 91-33-230 2413

जम्भिक गांव की स्थिति

वर्तमान बिहार के भूगोल का अध्ययन करने तथा बिहार के कतिपय स्थानों का पर्यटन करने पर अवगत होता है कि भगवान् का कैवल्य प्राप्ति का स्थान वर्तमान मुंगेर से ५० मील दक्षिण की दूरी पर स्थित जमुई गांव है। यह स्थान वर्तमान क्विल नदी के किनारे पर है। यही नदी ऋजुकूला अर्थात् ऋष्युकूला का अपभ्रंश है, क्विल स्टेशन से जमुई गांव १८-१९ मील की दूरी पर अवस्थित है। जमुई से ४ मील उत्तर की ओर क्षत्रियकुण्ड और काकली नामक स्थान है। इन स्थानों की प्राचीनता आज भी प्रसिद्ध है। जमुई के तीन मील दक्षिण में एनमेगढ़ नामक एक प्राचीन टीला है। कनिंघम ने इसे इन्द्रद्युम्नपाल का माना है। यहाँ पर खुदाई में मिट्टी की अनेक मुद्राएँ प्राप्त हुई हैं। वर्षाकाल में अधिक पानी बरसने पर यहाँ अपने आप ही अनेक मनोज्ञ मूर्तियाँ निकली है। लेखक ने भी खण्डित पार्श्वनाथ और श्री आदिनाथ की मूर्तियों के दर्शन किये हैं।

जमुई और लिच्छवाड़ा के बीच मे महादेव सिमरिया गांव है। यहाँ सरोवर के मध्य एक ३००-४०० वर्ष पुराना मन्दिर है। इस मन्दिर में कुछ प्राचीन जैन प्रतिमाएं भी हैं। जमुई से १५-१६ मील पर लक्खीसराय है। यहाँ एक बड़ी पर्वत श्रेणी है, जिससे प्रतिवर्ष अनेक जैन और बौद्ध प्रतिमाएँ निकलती हैं। जमुई और राजगृह के बीच सिकन्दरा गांव तथा सिकन्दरा और लक्खीसराय के मध्य में एक आम्रवन है। कहा जाता है कि इस आम्रवन में भगवान महावीर ने तपश्चरण किया था। आज भी निकटवर्ती लोग इस वन को पावन मानकर इसके वृक्षों की पूजा करते हैं।

जमुई गांव की भौगोलिक स्थिति से यह स्पष्ट है कि यह ऋजुकूला, जिसका संस्कृत में ऋष्यकूला नाम था, वर्तमान अपभ्रंश क्विल नदी ही है, और इसका तटवर्ती वर्तमान जमुई गांव ही जम्भिक ग्राम है । मेरे इस कथन की पुष्टि जमई गाँव के आस-पास भ्रमण करने, वहाँ प्रचलित किंवदन्तियों के संकलन करने तथा उपलब्ध पुरातत्व के दर्शन करने से स्पष्ट हो जाती है। जमुई के दक्षिण लगभग ४-५ मील की दूरी पर एक के वाली नामक ग्राम है जो भगवान महावीर की केवलज्ञान की स्मृति को बनाये रखने के लिये ही प्रसिद्ध हुआ होगा। इस गाँव के समीप बरसाती अंजन नदी बहती है, जिसके किनारे पर बालू अधिक पायी जाती है। सिकन्दराबाद तथा

सभी जीवों को अपना आयुष्य प्रिय है, सुख-अनुकूल है और दुःख प्रतिकूल है। वध सभी को अप्रिय लगता है और जीना सबको प्रिय लगता है। प्राणीमात्र जीवित रहने की कामना वाले हैं, सबको अपना जीवन प्रिय लगता है।

केवाली निवासियों से बातें करने पर वे कहते हैं यही केवाली भगवान महावीर का केवलज्ञान स्थान है तथा अंजन नदी को ऋजुपालिका या ऋजुवालिका बतलाते हैं। इस केवाली गांव निवासियों में कुछ ऐसी धारणाएँ भी विद्यमान है जिनमें उनका भगवान महावीर के प्रति श्रद्धा तथा भक्तिभाव प्रकट होता है।वैशाख शुक्ला दशमी, जो कि भगवान महावीर की कैवल्य प्राप्ति की तिथि है, इस दिन सामूहिक रूप से उत्सव भी मनाया जाता है। यह प्रथा आज भी अवशेष है। सिकन्दराबाद के निवासी श्री भगवानदास केसरी ने इस स्थान से अनेक पुरातत्वावशेषों का संकलन किया है तथा उनके पास ऐसी अनेक किंवदन्तियों का संग्रह भी है जिनसे जमुई का निकटवर्ती प्रदेश भगवान का बोधि प्राप्ति स्थान सिद्ध होता है।

जमुई से राजगिरि लगभग ३० मील की दूरी पर है जब कि झरिया से १००, १२५ मील से कम नही है। यह निश्चित है कि भगवान महावीर का बोधिस्थान मगध में और साथ ही राजगिरि से ३०-३५ मील दूरी पर था। जमुई भी वज्रभूमि है, यहाँ भी पृथ्वी के नीचे पत्थर निकलते हैं। पहाड़ी स्थान भी है। जमीन पथरीली और ऊबड़-खाबड़ है। जैन और बौद्ध दोनों ही का पुरात्तत्व यहाँ उपलब्ध है । यदि यहाँ खुदाई की जाये तो निश्चित ही यहां से अमूल्य वस्तुएं प्राप्त हो सकती है। अतः वर्तमान जमुई गाँव का निकटवर्ती वह प्रदेश जहाँ आजकल केवाली ग्राम बसा है, भगवान का बोधि स्थान है।

'आहार की शुद्धि होने पर ही अंतःकरण की शुद्धि होती हैं।"
M/S. UJJWAL TRADING PVT. LTD.
Regd Office : 11, Clive Row, 3rd Floor, Room No. 14,
Calcutta - 700 001 • Phone : 242 4131/4756

महावीर का वीतराग दर्शन

चंचलमल चोरड़िया

महावीर का दर्शन पूर्णतः वैज्ञानिक

इस संसार में समय समय पर अनेकों महापुरुष हो चुके है जिन्होंने पीड़ित मानव को सन्मार्ग पर लगाने का प्रयास किया। प्रायः सभी धर्म प्रवर्त्तक अपनी-अपनी विशिष्टताओं से अलकृंत थे। उन्होने देश, काल, परिस्थितियों के अनुरूप अपनी-अपनी प्रज्ञा के अनुसार तत्कालीन समस्याओं के समाधान में सहयोग दिया। मानव को उसके परम लक्ष्य एवम् कर्तव्यों का बोध कराया। नर से नारायण और आत्मा से परमात्मा बनने की कला सिखलाई, जिसका उनमें आस्था रखने वाले विभिन्न धर्मावलम्बी अनुयायी आज भी आचरण करने का प्रयास करते हैं। प्रायः सभी व्यक्ति अपने-अपने धर्म अथवा आचरण को सर्व श्रेष्ठ मानते हैं। परन्तु धर्म क्या हैं? उसका आचरण क्यों और कैसे किया जाना चाहिये? धर्म तो सदैव कल्याणकारी होता है। अपरिवर्तनीय होता है। वैमनस्य विरोध और विभेद को कोई स्थान नहीं। धर्म अलग है और साम्प्रदायिकता अलग है। धर्म तो प्राणी मात्र को जन्म, जरा एवं मृत्यु रूपी चक्रव्यूह से मुक्त करता है। धर्म की प्रामाणिकता उसके मानने वाले अनुयायियों की संख्या के आधार पर नही, अपितु उसके सिद्धान्तों की सूक्ष्मता पर निर्भर करती है। उस दृष्टि से जितना स्पष्ट, तर्क संगत, वैज्ञानिक सूक्ष्म विश्लेषण वर्तमान युग में भगवान महावीर ने किया अन्यत्र दुर्लभ है।

महावीर जैन धर्म के प्रवर्तक नहीं

जैन परम्परा में तीर्थंकरों का स्थान सर्वोपरि है। वे साक्षात् ज्ञाता, द्रष्टा, वीतरागी होते हैं। भगवान महावीर से पूर्व भी इस अवसर्पिणी काल में तेईस तीर्थंकर हो चुके हैं। जिन्होने धर्म के शाश्वत स्वरूप का बोध कराया। महावीर ने किसी नये धर्म का प्रतिपादन नहीं किया, परन्तु उसी सनातन सत्य का साक्षात्कार कर प्राणिमात्र के कल्याण हेतु उपदेश दिया। सभी सर्वज्ञों के उपदेश सिद्धान्त समान होते है, क्योकिं सत्य सनातन होता है। आवश्यकता है उसके सही स्वरूप को समझने एवं अपनाने

जो व्यक्ति प्राणियों की स्वयं हिंसा करता है, दुसरों से हिंसा करवाता है
और हिंसा करने वालो का अनुमोदन करता है
इस प्रकार वह संसार में अपने लिए बैरभाव को ही बढ़ाता है।

की। धर्म आचरण की वस्तु है, थोपने की नहीं। इसी कारण जैनियों के महामन्त्र नमस्कार, मंगलपाठ, अनुष्ठानों की साधना में गुणों को ही महत्व दिया गया। किसी महापुरुष के नाम से पूजा अथवा गुणगान नहीं किया गया। अतः यह मानना गलत होगा कि वर्तमान में जैन धर्म के नाम से प्रचलित धर्म के प्रवर्तक भगवान महावीर थे।

महावीर मात्र नाम नहीं

महावीर मात्र नाम नहीं है, उसका सम्बन्ध कर्म से है, कथन मात्र से नहीं। जो वे करना चाहते थे उसका पहले स्वयं ने अनुभव किया। शारीरिक बल से मानसिक बल ज्यादा शक्तिशाली होता है और आत्मबल के सामने सारे बल तुच्छ हैं। युद्ध में हजारों योद्धाओं को जीतने की अपेक्षा अपने आपको जीतना, स्वयम् को संयमित, नियन्त्रित, अनुशासित रखना ज्यादा दुष्कर है। आत्मा पर आये कर्मो का आवरण हटते ही व्यक्ति सर्वज्ञ, सर्वदर्शी, सर्व शक्तिमान एवम् त्रिकाल ज्ञाता, द्रष्टा बन जाता है। सम्पूर्ण आत्मानुभूति की अवस्था में विज्ञान की भौतिक जानकारी तो होती ही है, परन्तु उससे भी कहीं अधिक ब्रह्माण्ड के वर्तमान, भूत एवम् भविष्य की सूक्ष्मतर एवम् सम्पूर्ण जानकारी हो जाती है। वास्तव में वे जीवन के सर्वोच्च कलाकर, पथ प्रदर्शक एवम् सर्वोच्च वैज्ञानिक होते हैं। उनका उपदेश भौतिक उपलब्धियों की प्राप्ति के लिये न हो कर जीवन के अंतिम लक्ष्य मोक्ष प्राप्ति हेतु होता है।

महावीर को समझने के लिये हमें पहले अपने सभी पूर्वाग्रहों को छोड़ना होगा। उनका प्रत्येक आचरण एवम् उपदेश सनातन सत्य पर आधारित है, जिसकों समझने के लिये आवश्यक है व्यापक दृष्टिकोण। उनके उपदेश परिस्थतियों एवं काल के थपेड़ों के बावजूद आज भी अक्षुण्ण बने हुए हैं। आध्यात्मिक साधना में उनका दृष्टिकोण सम्पूर्णता की खोज पर आधारित था। अनुशासनहीनता के बीच उनका जोर आत्मानुशासन पर था। उन्होंने आत्म-विकास के लिये ज्ञान एवम् क्रिया के समन्वित प्रयास को आवश्यक बतलाया। वे उस ढोंगवाद को नहीं मानते जो भोगी होते हुए भी अपने आपको परम योगी मानते हैं। भोगीं निर्विकारी कैसे हो सकता है? जो मन में होगा वही तो आचरण में प्रदर्शित होगा। उन्होने भाव क्रिया के महत्व को भी उजागर किया। मात्र जड़ क्रिया काण्डो से व्यक्ति का उत्थान नही हो सकता।

"सुख कही बाहर से नहीं आता"
RAJIV LALWANI
12, Duff Street Calcutta, Phone : 255 6705 (Resi)

उन्होंने यतना अर्थात् विवेक में ही धर्म माना। यदि हमारा प्रत्येक कार्य विवेक की प्रज्ञानुसार हो तो नवीन कर्मों के बन्ध की सम्भावनाएं कम हो जाती हैं। उनके अनुसार प्रमाद विकास में सर्वाधिक बाधक है। प्रमाद अर्थात सुषुप्त अथवा आलसी। अज्ञानी ही प्रमादी होता है। जो स्वयम् असजग है, अपने प्रति भी ईमानदार नहीं, वह दूसरों को कैसे जगा देगा। अतः भगवान महावीर ने स्वयम् १२$^{१}/_{२}$ वर्ष तक उग्र साधना कर पूर्णता प्राप्त की। जब तक सर्वज्ञ न बने पूर्ण मौन रहे। परन्तु जागृत होने के पश्चात् संसार को सही मार्ग के उपदेश देने में कंजूसी नहीं की। जीवन में प्रवृति और निवृति की जितनी सूक्ष्मतम, तर्क संगत व्याख्या और विवेचन महावीर ने श्रमणाचार की नियमावली में किया उसकी अन्यत्र कल्पना भी नहीं की जा सकती। आज भी बढ़ती मायावृति एवम् शिथिलाचार के बावजूद महावीर की परम्परा के श्रमण एवम् श्रमणी वर्ग, जिस सूक्ष्म अहिंसा का पालन कर अपनी जीवनचर्या चलाते हैं, वैसी कठोर आचार संहिता अन्यत्र ढूँढ़ना कठिन है। वास्तव में महावीर का उपदेश प्राणिमात्र के लिये उपयोगी है। वहां भेद-भाव और आशंकाओं की कोई गुंजाइश नही। न तो किसी के साथ भेद-भाव न अपने भक्तों के लिये विशेष रियायत। उनके विराट् व्यक्तित्व को चन्द प्रसंगों के आधार पर परखा जा सकता हैं।

प्रतिकूलता आत्मबल की कसौटीः

महावीर ने साधना हेतु राजपाट छोड़ा। पद, पैसे और परिवार का त्याग किया। अगर वे चाहते तो अपने राज्य में भी एकान्त साधना कर सकते थे। परन्तु उन्होंने साधना के लिये प्रतिकूल क्षेत्र चुना जहां उनका कोई परिचित नहीं था। वे जानते थे कि आत्मबल की परीक्षा प्रतिकूलता में ही हो सकती हैं। परन्तु आज हम प्रतिकूलताओं को पसन्द नहीं करते । उन्होनें पद, पैसा और परिवार का मोह त्यागा। परन्तु आज प्रायः हम पद, पैसे और परिवार के पीछे दीवाने बन अपने आपको उनके अनुयायी समझने का अहम् करें, कितना अप्रासंगिक है। जिस पर सारे पूर्वाग्रह छोड़ कर शुद्ध चिन्तन अपेक्षित है।

स्वावलम्बन के उद्घोषकः

महावीर आत्म-साधना में स्वावलम्बन के पक्षधर थे। मनुष्य को अपने कर्मों का क्षय अपने ही पुरुषार्थ से करना होगा। अतः वे साधना पथ पर अकेले ही आगे बढ़े।

धर्म श्रद्धा से वैषयिक सुखों की आसक्ति छोड़कर
जीव वैराग्य को प्राप्त कर लेता है।

जब देवों के सम्राट शकेन्द्र उनकी सेवा में उपस्थित हो प्रार्थना करने लगे "भगवन् आपको साधना काल में भंयकर उपसर्ग (कष्ट) आने की संभावना है, अतः मैं आपकी सेवा में रहकर उससे रक्षा करना चाहता हूँ।" उसके प्रत्युतर में भगवान महावीर ने कहा-"आज तक कोई भी प्राणी दूसरों की सहायता से अपने समस्त कर्मों से मुक्त नहीं हुआ। किये हुए कर्मो का भुगतान तो स्वयम् को ही करना पड़ता है।" इस प्रकार उन्होनें प्राणी मात्र में स्वावलम्बी बन अपनी सुषुप्त चेतना को जागृत करने का आत्मविश्वास जागृत किया। स्वावलम्बन की पहली शर्त है स्वाधीनता। पराधीनता दुःख का कारण है जो दासता में जकड़ती है। स्वाधीनता में ही सुख है। वही अपनी शक्तियों के विकास का केन्द्र बिन्दु है। स्वाधीनता से ही अपनी अन्नत शक्तियों का द्वार खुलता है। जिससे सम्यक् ज्ञान, सम्यक् दर्शन और सम्यक् चारित्र प्रकट होता है। महावीर कठोर, परन्तु हृदयग्राही आत्मानुशासन के प्रवर्तक थे। साधक यदि कठोर मार्ग पर न चले तो उसके फिसलने की संभावना सदैव बनी रहती है। अतः वे स्वयं कठोर चर्या में रहे तथा अपने शिष्य समुदाय के लिये भी उन्होनें कठोर श्रमणाचार का निर्देशन किया। उन्होंने भक्त और भगवान के बीच की खाई को समाप्त करने का उपदेश दिया। वे भक्त को सदैव भक्त ही रखने के पक्षधर नहीं थे। अवतारवाद की मान्यता उन्हें स्वीकार नहीं थी। उन्होंन प्राणी मात्र के अन्दर उस परम परमात्म-पद को पहिचाना। इसी कारण उनके सम्पर्क में आकर सम्यक्त्व साधना में पुरुषार्थ करने वाले अनेक साधक उनके समकक्ष सर्वज्ञ बन गये।

अनन्त करुणामय व्यक्तित्व

दुनिया में मातृत्व में ही इतनी शक्ति है कि बच्चे के प्रति अपार अनुराग होने से माता के स्तनों में दूध आने लगता है। महावीर के जीवन के अलावा संसार में आज तक ऐसा दृष्टान्त उपलब्ध नहीं कि चण्डकौशिक जैसा भयंकर दृष्टि विषधारी सर्प काटे और रक्त के स्थान पर दूध की धारा बहे। प्राणिमात्र के प्रति कितनी दया, करुणा, अनुकम्पा और कल्याण की भावना होगी ऐसे महापुरुष में, जिसकी सहज कल्पना भी नहीं की जा सकती।

"राग द्वेष के परित्याग से दुःखों का अन्त किया जा सकता है"
RATANLAL DUNGARIA
16 B, Ashutosh Mukherjee RoadCalcutta - 700 020
Phone : 455-3586 (Resi)

नारी उत्थान

भगवान महावीर के युग में भारतीय नारी की बहुत दुर्दशा थी । नारी उत्पीड़न की तरफ जनसाधारण का ध्यान आकर्षित करने हेतु अपने साधना- काल में उन्होंने तेरह बोलों का कठोर अभिग्रह (संकल्प) लिया। जिसके अनुसार उन्होंन तब तक भिक्षा ग्रहण न करने का निश्चय किया जब तक कोई तीन दिन की भूखी रोती हुई, भूतकाल की राजकुमारी , हाथों और पैरों में बेड़ियां पहिने, सिर मुण्डित अबला उन्हें भिक्षा नहीं देगी। कैसी उपेक्षित थी नारी उस युग में? सहज ही कल्पना की जा सकती है।

ऐसे समय नारी को अपने धर्म-संघ में दीक्षित कर श्रमणी बनाना तथा अपने धर्म तीर्थ में साधु और श्रावक के समकक्ष साध्वी तथा श्राविका को स्थान देना उस युग का कितना क्रान्तिकारी कदम होगा।

जातिवाद का प्रतिकार

भगवान महावीर की स्पष्ट घोषणा थी कि मनुष्य जन्म से नहीं कर्म से ही महान् बनता है। हरिकेशबल जैसे नीच कुल में जन्में क्षुद्र को अपने धर्म संघ में दीक्षित कर, धर्म के नाम पर राष्ट्र में विघटन करने वालों एवम् अपने स्वार्थों से प्रेरित अनुसूचित एवम् नीच जातियों के उत्थान का दावा करने वालों को महावीर के जीवन प्रसंगों का अध्ययन कर अहम् छोड़ देना चाहिये।

पाप से घृणा करो पापी से नहीं

भगवान महावीर ने अर्जुनमाली जैसे ११४१ व्यक्तियों की हत्या करने वाले को अपने धर्म संघ में दीक्षित कर साधना के क्षेत्र में इतना गतिमान किया कि छः मास के अन्दर ही उसने अपने लक्ष्य को प्राप्त कर लिया। भगवान महावीर ने इस घटना के माध्यम से जनसाधारण को प्रतिबोधित किया, **''पाप से घृणा करो पापी से नहीं। क्योकि पापी कभी भी पाप छोड़ धर्मी बन सकता हैं परन्तु पाप कभी धर्म नहीं हो सकता।''**

राग द्वेष त्यागे बिना मोक्ष नहीं

सम्पूर्ण सत्य की व्याख्या और सूक्ष्मतम विश्लेषण वही कर सकता है जो स्वयम् वीतरागी है। उसका न तो किसी के प्रति राग है और न किसी के प्रति द्वेष। जब तक राग और द्वेष रहेगा अपने भक्तों के प्रति ममत्व और अन्य की उपेक्षा होना संभव है। विश्व के इतिहास में शायद ही कहीं ऐसा दृष्टान्त मिलता है कि भक्त अपने परम

तैरना जानते हुए भी कोई जल प्रवाह में कूदकर शारीरिक चेष्टा न करे तो वह जल में डूब जाता है,
इसी प्रकार धर्म सिद्धान्तों को जानते हुए भी कोई उनका पालन न करे
तो वह मुक्त नहीं हो सकता है।

लक्ष्य मोक्ष को तब तक प्राप्त न कर सका जब तक उसको अपने आराध्य के प्रति राग था। भगवान महावीर के प्रमुख शिष्य गणधर गौतम को भी तब तक केवल ज्ञान की प्राप्ति नहीं हुई जब तक कि उनका भगवान के प्रति राग समाप्त नहीं हुआ। आज जो साम्प्रदायिक कट्टरता से धर्म बदनाम हो रहा है, उसका रूप विकृत हो रहा है, अपने को ही अच्छा और अन्य को बुरा बतलाकर घृणा का वातावरण बनाया जा रहा है उन सभी धर्म के ठेकेदारों को चिन्तन करना होगा कि कहीं उनका आचरण उनके आत्म-विकास में बाधक तो नहीं है?

सम्यकत्व ही साधना का केन्द्र

भगवान महावीर ने मिथ्यात्व अथवा गलत धारणा, मान्यता, श्रद्धा को मोक्ष की साधना में सबसे अधिक बाधक माना। सम्यकत्व (सही दृष्टि) के बिना ज्ञान सच्चा ज्ञान, नहीं और आचरण सम्यक् हो नहीं सकता। उनकी साधना का लक्ष्य था समभाव से वीतरागता की प्राप्ति। समता ही धर्म का लक्षण है। वह विवादों से परे है। उतार-चढ़ाव, मान-अपमान, अनुकूल-प्रतिकूल परिस्थितियों में अपने आपको विचलित न होने देने का मूल मन्त्र है। दूसरी बात यह है कि जब तक जीव अजीव का सूक्ष्मतम भेद समझ में नहीं आवेगा अहिंसा का पालन पूर्ण रुप से नहीं हो सकता'। पृथ्वी, अग्नि, वायु, जल और वनस्पति में चेतना को सर्वज्ञ ही जान सकते हैं। वर्तमान विज्ञान की पहुंच से भी वह बहुत परे है। इसी कारण अन्य धर्मों में सूक्ष्म हिंसा से बचने का प्रावधान एवम् सोच नहीं है, जितना बारीकी से जैन श्रमणाचार की नियामावली में प्रतिपादित किया गया है।

महावीर का दर्शन सभी के लिये जीवन्त दर्शन है।अलौकिक दर्शन है। उसके अभाव में ज्ञानी का ज्ञान,पंडित का पाँडित्य, विद्वान की विद्वत्ता, धार्मिक का धर्माचरण, भक्तों की भक्ति, अहिंसकों की अहिंसा, न्यायाधीश का न्याय ,राजनेताओं की राजनीति, वैज्ञानिकों की वैज्ञानिक शोध, चिकित्सकों की चिकित्सा,चिन्तकों का चिन्तन, लेखकों का लेख, कवि का काव्य, अधूरा है जो सार्वकालिक सत्य नहीं भी हो सकता है। कहने का सारांश यही है कि महावीर के सिद्धान्तों से मतभेद रखना, उन्हें अस्वीकारना, चिन्तनशील, प्रज्ञावान, विवेकवान व्यक्ति के लिये संभव नहीं। फिर वह जीवन का कोई भी क्षेत्र क्यों न हों उनके दर्शन में अहिंसा, अनेकान्त, अपरिग्रह का समग्र दर्शन है जो शाश्वत सत्य की आधार-शिला पर प्ररूपित किया गया हैं।

"जीव स्वयं कर्म का कर्त्ता व भोक्ता हैं।"
A. D. ELECTRO STEEL CO. (PVT.) LTD.
BALITIKURI (SURKIMILL), KALITALA, HOWRAH
Phone : 220-3889/0714, Resi : 471-8393 • Works : 667-0485/2164, Fax : 91-33-667 2164

भगवान महावीर और नारी

श्रीमती राजकुमारी बेगानी

अनुत्तर योगी तीर्थंकर महावीर गर्भावस्था से ही आत्म-प्रज्ञ थे। वे धीर, वीर, गम्भीर थे। जन्म-जन्म की तप साधना के कारण मति, श्रुत, अवधि तीन ज्ञान के धारक थे। अन्तरचेतना की लीनता तथा परम कारुणिकता उनका सहज स्वभाव था। वे गर्भ में भी पूर्ण जागरुक थे। जगत की गति-मति, विधि-विधान पर उनका निर्बाध चिन्तन सतत प्रवाहित था। हीन भावना से ग्रस्त नारी की मार्मिक पीड़ा, उस पर होनेवाले अत्याचार, अन्याय, दुराचार, उसकी दबती-लुटती अस्मिता योग्य वस्तुओं की तरह सरे बाजार में उसका क्रय-विक्रय सब कुछ उस चरम एकान्त में एक-एक कर उनके मस्तिष्क पटल पर उभर रहे थे, मिट रहे थे, बन रहे थे और वे डूब-डूब रहे थे चिन्तन के उस अथाह सागर में।

तभी उन्हें विचार आया अरे, जिसने मुझे गर्भ में धारण कर रखा है माँ की संज्ञा से विभूषित वह भी एक कोमलांगी नारी ही है। ओह, मेरे इस प्रकार हलन-चलन से कितनी वेदना हो रही होगी मेरी माँ को? तब तो फिर सर्व प्रथम मुझे मेरी माँ की वेदना का ही लाघव करना है। अतः तुरन्त निष्कम्प, निष्पन्द, हो गए। किन्तु देखा, इसका परिणाम उनके शुभ सोच के विपरीत हुआ। माँ ने सोचा मेरा गर्भ नष्ट हो गया। बिलख-बिलख कर रो पड़ी त्रिशला। सह न सकी इस अपार वेदना को। अपने दुर्भाग्य को कोसती हुई करुण क्रन्दन करती हुई वह बार-बार बेसुध हुई जा रही थी। उसके साथ ही एक व्यथित, विमूढ़, दिग्भ्रमित था पूरा राजपरिवार, पूरा क्षत्रियकुण्ड।

महावीर की विचारधारा पलटी। सोचने लगे जिसे कल्याणकारी समझा वही दुखकारी हुआ। कितना प्रगाढ़ है यह मोह का जाल। कितनी ममतामयी होती है माँ। अभी तो इसने मुझे देखा तक नहीं उसपर इतना प्रगाढ़ ममत्व? तब क्या वे सहन कर सकेंगी उन क्षणों को जब मैं प्रवज्या ग्रहण करूँगा। देख सकेंगी उस

काम भोग शल्य के समान है, काम भोग विष के समान है,
काम भोग दृष्टि विष के सर्प के समान है।
काम भोग की अभिलाषा करने वाले, काम भोग न भोगने पर भी दुर्गति पाते हैं।

दृश्य को जब मेरा महाभिनिष्क्रमण होगा? असम्भव है एकदम असम्भव। बस, तत्काल प्रतिज्ञाबद्ध हो गए, मैं जब तक मेरे माता-पिता जीवित हैं दीक्षा नहीं लूँगा। धन्य है वीर तुम्हारी इस अनुपम विलक्षण मातृ भक्ति को युगों- युगों तक लोग इसे स्मरण करेंगे, प्रेरणा लेंगे। इसी उत्कृष्ट मातृ भक्ति से प्रेरित होकर माता के प्रबल अनुरोध पर परम सुन्दरी क्षत्रिय कन्या यशोदा के साथ विवाह किया। परिणय-सूत्र में बंधे। कालान्तर में उनके एक पुत्री भी हुई प्रियदर्शना। जिसका विवाह उन्हीं के भांजे जमाली से हुआ। एक अनिद्य सुन्दरी दोयती भी हुयी। शेषवती। किन्तु क्या यह मोह-जाल सचमुच महावीर को अपने में उलझा सका। नहीं कदापि नहीं, महावीर का मन तो इस सभी भोग विलास ऐश्वर्य में भी निरासक्त था। उनकी सभी वृत्तियाँ आसक्ति रहित थीं। इस सब की सूत्रधार तो उनकी माँ, परमादरणीया श्रद्धास्पद माँ। सब कुछ मात्र उन्हीं के लिए, उन्हीं की प्रसन्नता के लिए।

आखिर वह दिन भी आया जिस दिन उनके माता पिता का परलोकगमन हुआ। अब उन्होंने अपने प्रिय अग्रज नंदीवर्द्धन के समक्ष प्रवर्जित होने की अभिलाषा प्रकट की। सुनते ही वे कांप उठे। बोले अभी तो माता पिता के वियोग का घाव भी नहीं भरा है और तुम भी मुझे छोड़ कर जा रहे हो। कम से कम दो वर्ष और रुक जाओ। भला महावीर की विनम्रता इसे अस्वीकार कैसे करती अतः अन्तर मन से परांगमुख होने पर भी स्वीकृति के लिए बाध्य हुए।

इन दो वर्षों को उन्होंने साधु जीवन की भांति ही व्यतीत किया। उनकी सहधर्मिणी यशोदा ने अपने उस महान् पति के समस्त क्रिया कलापों को निकट से देखा। उनके जन-कल्याण जनित-वैराग्य भाव को गहरायी से, सम्यकदृष्टि से समझा।

महाभिनिष्क्रमण का समय आया उन्होंने घर छोड़ा किन्तु बुद्ध की भांति सोयी हुयी यशोधरा और निद्रामग्न राजमहल को चुपके से नहीं छोड़ा, और न ही ममत्व भाव से फिर कर यशोदा या राजमहल को देखा। देखते भी क्यों? वे तो थे प्रारम्भ से ही स्थितप्रज्ञ। वे घर से निकले धूम-धाम से, गाज-बाजे से, परम प्रसन्नता से । क्योंकि वे जन-मंगल के कल्याणकारी पथ की, स्वआत्म की जानकारी के लिए, शोध के लिए जा रहे थे। वे जा रहे थे सबकी अनुमति से, सबकी सहमति से।

फिर महापुरुषों की महीयशी भार्याएँ भी तों उन्हीं की तरह महान् होती थीं,

"आचरण के बिना मोक्ष असम्भव है।"
Sudip Kumar Singh Dudhoria
Phone Off. : 252 565/6314 • Resi : 475 3133

सम्यकदृष्टि सम्पन्न होती थीं।कहीं भी इसका उलेख नही है कि यशोदा उनकी पथ-बाधक बनी। व्यथित बुद्ध पत्नी यशोधरा कहती है- सखि वे मुझसे कह कर जाते तो क्या मुझको अपने पथ की वे बाधा ही पाते। यशोदा के पास यह उपालम्भ नहीं था।युग प्रवर्त्तक महावीर एक क्रान्तिकारी पुरुष थे। उन्होनें युगों-युगों से जड़बनी सुप्त मानव चेतना को झंझोर कर जागृत किया, उसे युग-बोध प्रदान किया। उन्होंने अहिंसा को नहीं समता को भी परमधर्म माना- विषमता को ही समस्त अनर्थों की जड़ समझकर उसे ही समाप्त करने की पुरजोर कोशिश की। उन्होनें अपनी समस्त वैयक्तिक उपलब्धियों को सामाजिक चेतना के विकास को समर्पित कर दिया। प्रारम्भिक सामाजिक अवस्था में स्त्री -पुरुष में कोई भेदभाव नहीं था। भगवान ऋषभ ने अपनी दोनों पुत्रियों ब्राह्मी और सुन्दरी को गणित एवं लिपि का ज्ञान करवाया, उन्हें चौंसठ कलाओं का अधिकारी बनाया।

पूर्व वैदिक काल में भी नारी पूर्ण गरिमामयी थी। पुरुषों की भांति ही वह शास्त्रार्थ करती थी। किन्तु ब्राह्मण-काल आते-आते पुरुषों का प्राधान्य हो गया। इसका प्रमुख कारण था पुरुषों का आर्थिक क्षेत्र में एकमात्र अधिकार और पुत्र का धार्मिक महत्व। पितरों की आत्मशान्ति के लिए उनकी सद्गति के लिए पुत्र द्वारा श्राद्ध करना, तर्पण करना अनिवार्य हो गया। इस धारणा से स्वभावतः पुत्र और पुत्री में भेद उत्पन्न हो गया। यदि किसी के पुत्र नहीं होता तो पितरों की ऋण मुक्ति के लिए दत्तक पुत्र की प्रथा चल पड़ी। महावीर ने इस विषमता पर कठोर प्रहार किया उन्होंने उद्घोषित कर दिया कि मनुष्य सद्गति पाता है अपने सदकर्मों से- दुर्गति पाता है अपने दुष्कर्मों से। पुत्र द्वारा श्राद्ध तर्पण ये सब ढोंग है पाखण्ड है। उनकी तपःपूत वाणी ने जन -मानस के हृदय को आन्दोलित किया, तथ्य के सत्य स्वरुप को प्रकट किया और इस भांति शुद्ध दृष्टि कोण को पाकर नव- जागरण का अभ्युदय हुआ।

महावीर का युग अभिशप्त था दास -प्रथा जैसी अमानवीय प्रथा से। यह एक ऐसी प्रथा थी जिसमें पुरुषों और नारियों का गाजर-मूली की तरह खुले बाजार में क्रय-विक्रय किया जाता था । दासता की श्रृंखला में जकड़ा पुरुष असाध्य यातनाओं के अत्याचारों को झेलता हुआ दिन-रात कठोर श्रम करता चौबीसों घण्टों स्वामी की सेवा के लिए जागरुक रहता। क्योंकि यदि मालिक चाहे तो उसे जान से भी

जैसे किंपाक फल का परिणाम अच्छा नहीं होता।
उसी प्रकार भोगों का परिणाम अच्छा नहीं होता।

मार सकता था। किन्तु नारी की विवशता दोहरी थी। उसे कठोर यातनाओं के साथ मालिक की कामुक पशुवृति का भी शिक़ार बनना पड़ता था। चीत्कारता रहता उसका नारीत्व, चूर-चूर हो जाता उसका मातृत्व । अन्त नहीं था उसकी लोमहर्षक पीड़ाओं का, प्रताड़नाओं का। बिलख रही थी वह दासत्व के प्रगाढ़ काले अन्धकार में।

तभी महावीर रूपी सूर्य उदय हुआ आकाश की गरिमामयी प्राची में। उसी ने समाप्त किया इस क्रूर प्रथा को। क्रीतदासी चन्दना से छः मास की दीर्ध तपश्चर्या के पश्चात् उसी के हाथों आहार ग्रहण कर। और वह आहार मिष्ठान-पकवान नहीं उड़द का बाकला था। उन्होंने समाज को दिखा दिया कि रानी, सेठानी और दासी में कोई भेद नहीं। उन्होंने बड़े राजघरानों से भिक्षा नहीं ली, बड़े-बड़े सेठ सामन्तों से भी भिक्षा नहीं ली जब कि सभी समुत्सुक थे महावीर को आहार बहराने के लिए किन्तु दासत्व का अन्त करने के लिए उन्होंने भिक्षा ली बेड़ियों में जकड़ी क्रीतदासी चन्दना से । महावीर ने सिद्ध कर दिया आध्यात्मिक क्षेत्र में महत्व है आत्मा की निर्मलता का धन- सम्पत्ति और सत्ता का नहीं, मात्र पुरुषों का भी नहीं। उनका यह कार्य पुरुष के झूठे दंभ और अभिमान पर भी एक आघात था जो कि स्वयं को नारी से श्रेष्ठ समझता है।

केवल ज्ञान की प्राप्ति के पश्चात् जब महावीर ने चतुर्विध संघ की स्थापना की चन्दना को उसके गुणों के आधार पर ३६ हजार साध्वियों में साध्वी प्रमुखा बनाया। उनके नेतृत्व की बागडोर चन्दना के हाथ में थी। उन्होने यह भी सिद्ध कर दिया कि शारीरिक भिन्नता होने पर भी आत्मिक दृष्टि से नारी और पुरुष में कोई भेद नहीं है। साधना के क्षेत्र में दोनों समान हैं और दोनों ही अधिकारी हैं मोक्ष के। बल्कि देखा जाए तो तप और त्याग के क्षेत्र में धर्म और संस्कृति की रक्षा में नारी ने जो कीर्तिमान स्थापित किया वह विलक्षण है, अदभुत है।

महावीर के संघ की प्रमुख विशेषता यह थी कि उसमें रानी-महारानियों की भांति हर स्त्री दीक्षित हो सकती थी चाहे वह दीन-हीन हो, घर से प्रताड़ित हो, पुरुषो द्वारा सतायी गयी हो, कामुक अत्याचारियों द्वारा शील भंग कर दी गयी हो। ऐसी नारियों को समाज ने घृण्य दृष्टि से देखा, क्रूरता से ठुकराया किन्तु महावीर ने

"सब जीव अपनी भूल सुधार कर सुखी हो सकते है"
WILLARD INDIA LIMITED
Mcleod House, 3, Netaji Subhash Road, Calcutta - 700 001
Tele. Off - 248 7476-8 • Resi. 475-4851/1483 • Fax : 248-8184

ससम्मान अपनाया। क्योंकि वे कर्मवाद के सिद्धान्तों को सूक्ष्मता से जानते-पहचानते थे। महावीर संघ में ऊँच-नीच, जाति-पांति का कोई भेदभाव नहीं था वहां हर नारी दीक्षित हो सकती थी चाहे वह गर्भवती ही क्यों न हो। महावीर संघ उसे शरण देता था। वह प्रसव के समय दीक्षा छोड़कर पुनः दीक्षित हो जाती। और उसके बच्चे का भरण-पोषण करते थे संघ के श्रावक-श्राविका। इस भांति लांछना के भीतर सिसकती नारियों को हीन भावना से मुक्त कर उसकी कुण्ठा को समाप्त कर सम्माननीय जीवन जीने का द्वार उसके लिए खोल देते थे। अपनी आत्म साधना द्वारा वही नारियाँ आदरणीय बन जाती थीं, सद्‌गति की अधिकारी बन जाती थी। यह तो सर्व विदित है कि स्थविर स्थूलभद्र ने वेश्या कोशा को बारह व्रत धारिणी श्राविका बनाया।

महावीर ने स्त्री की सामाजिक स्थिति के उन्नयन के लिए रुढ़िग्रस्त मान्यताओं को तोड़ा और स्त्री को भी पुरुष के समान सामाजिक व धार्मिक जीवन का एक- सा अधिकारी बनाया।

हे अनुत्तर योगी।
अवाक् हैं हम, निस्तब्ध हैं हम
तुम्हारे इस नारी वात्सल्य पर,
बेजोड़ हो तुम, अप्रतिम हो तुम।
आवश्यकता है मात्र इसकी
युग चेतना तुम्हें समझे।

सरल स्वभाव वाले को ही शुद्धता प्राप्त होती हैं
और शुद्ध पुरुष के हृदय में ही धर्म ठहरता है, वह उत्कृष्ट निर्वाण प्राप्त करता है।

धनवान पुण्य से बना जाता है
पर धर्मात्मा बनने के लिए पुण्य नहीं
पुरुषार्थ चाहिए ।

R.C.Bothra & Company Pvt. Ltd.

Steames Agents, Handling Agents,
Commission Agents & Transport Contractors

Regd Office -

2, Clive Ghat Street, (N. C. Datta Sarani)
Calcutta-700001, 6th floor, Room No.-6
✆ 2206702, 2206400, Fax - (91) (033) 2209333

Vizag Office -

28-2-47 Daspalla Centre, Visakhapatnam - 530020
✆ 64227 / 64208 / 62146, Fax - (91) (0891) 569326
Gram - Bothra

भगवान महावीर का महानत्व

स्व० अगरचन्द नाहटा

तप भारतीय संस्कृति का महत्वपूर्ण अंग हैं। भगवान ऋषभदेव जो जैन धर्म के प्रथम तीर्थंकर, श्रीमद्भागवत् के अनुसार विष्णु के अवतार थे, ने महान तप किया, उनका वार्षिक उपवास तो इतना प्रसिद्ध हुआ कि आज भी उसकी परम्परा चली आ रही है। प्रतिवर्ष उनकी स्मृति में हजारों स्त्री पुरुष, साधु-साध्वी तक वर्षीतप करते हुए नजर आते हैं। भगवान ऋषभदेव के पारणे के दिन अक्षय- तृतीया (आखातीज) पर्व मनाया जाता है। वर्षीतप करने वाले आज भी शत्रुंजय, हस्तिनापुर, आदि तीर्थस्थानों तथा आचार्यों, मुनियों के सानिध्य में वर्षीतप का पारणा सम्पन्न करते हैं । महामना श्रैयांस कुमार ने भगवान ऋषभदेव का पारणा इक्षुरस से करवाया था जो आज भी उसी से कराया जाता हैं। भगवान ऋषभदेव के महान् बलशाली पुत्र बाहुबली ने भी वर्ष-भर का कायोत्सर्ग ध्यान में खडे रहकर तप किया था, उनकी भव्य मूर्तियां आज भी जगह-जगह पूजी जाती है। श्रवणबेलगोला में उनकी सत्तावन फूट की मूर्ति तो विश्वविख्यात हैं। भव्य मूर्ति को देखते ही भव्य भावना का उदय होता हैं।

भगवान ऋषभदेव ने जब राज्य परिवार छोड़कर दीक्षा ली, तब उनके साथ चार हजार व्यक्ति दीक्षित हुए थे। पर उनके लिये वर्षभर निराहार रहना संभव नहीं था अतः वे जंगलों में वृक्षों के फल-फूल पत्ते आदि खा कर उदरपूर्ति करने लगे , और तालाबों का पानी पीकर तृष्णा शांत करने लगे। पर साथ ही विविध प्रकार के तप भी वे करते रहे। अतः उनसे तापसी नामक एक स्वतंत्र सम्प्रदाय चालू हुआ, जिसकी परम्परा भगवान महावीर तक चलती रही। पंचाग्नि तप आदि अनेक प्रकार के काया कष्ट रूपी तप करने वाले अनेकों कठोर और उग्र तप करने वाले तापस भगवान महावीर के समय विद्यमान थे। जिनका उल्लेख जैन आगमों में विशेषतया, प्रथम उपांग सूत्र में पाया जाता है। उनको साधु परम्परा में ही सम्मिलित किया गया है। उनमें से कइयों ने तापसी सम्प्रदाय छोड़कर भगवान महावीर का शिष्यत्व भी ग्रहण कर लिया।

"मोह विवेक का नाश करता है।"

M/s. B. W. M. INTERNATIONAL

MANUFACTURERS OF EXPORTERS

Peerkhanpur Road, Bhadohi - 221 401 (U. P.) ✆ (O) 05414-25178, 25778, 25779 Fax : 05414-25378

Bikaner ✆ 0151-522404, 25973 • Fax : 0151-61256

श्रमण भगवान महावीर तो महान् तपस्वी थे ही । उन्होंने दीक्षा लेकर साढ़े-बारह वर्षों तक जो विशिष्ट तप किया उसका उल्लेख कल्पसूत्र आदि में इस प्रकार पाया जाता है

छः मासी १ पारणा, बिना पांच दिन कम छः मासी १ पारणा, चातुर्मासी ९ पारणे, ९ तीन मासी पारणे, २ ढाईमासी २- पारणे, २ दो मासी ६ पारणे, ६ डेढमासी २ पारणे, २ मास क्षमण १२ पारणे, १२ पक्ष क्षमण ७२ पारणे, ७२/छट तप २२९ पारणे /भद्र प्रतिमा २ दिन , महाभद्र प्रतिमा ४ दिन सर्वतोभद्र प्रतिमा १० दिन , इन तीनों प्रतिमा को लगाकर वहन की- जिनके उपवास १६ और पारणे ३ तथा १२ अठ्ठम और १२ पारणे हुवे। इस प्रकार ११ वर्ष छः महीने और २५ दिन तपस्या की तथा पहिले पारणे सहित सर्व ३५० पारणे हुवे। कुल १२ वर्ष ६ मास १५ दिन भगवन्त छदमस्थ अवस्था में रहे, इतने काल में मात्र एक मुहूर्त प्रमाद आया।

अर्थात् भगवान महावीर ने अपने साधना काल में इतने दीर्धकाल तक निर्जल उपवास और विहार रूप तपस्या की। यह तो केवल बाह्य तप का वर्णन हुआ। उसके साथ उन्होंने जो मौन ध्यान, उपसर्ग, परिषह आदि में समत्वभाव आदि अभ्यन्तर तप तो निरन्तर करते ही रहे। तप के द्वारा पूर्व कर्मों की महान् निर्जरा करके और आश्रव निरोध रूप सम्यक्तव को धारण करते हुए केवल ज्ञान और केवल दर्शन प्राप्त किया।

भगवान महावीर के शिष्यों में धन्ना अणगार की महान् तपस्या का वर्णन 'अन्तकृतदशा सूत्र' में पढ़कर रोमांच हो आता है। स्वयं भगवान महावीर ने उनके तप की बडी प्रशंसा की है। चौदह हजार मुनियों में उन्हें सर्वश्रेष्ठ धोषित किया है। इसी तरह बाइसवें तीर्थंकर भगवान नेमिनाथ के समय में भी उग्र तपस्वी ढंढण ऋषि आदि हुए, जिनकी प्रशंसा स्वयं भगवान नेमिनाथ ने की है। धन्य है ऐसे महान् तपस्वी को।

जैन तीर्थंकर के तप की एक महान् विशेषता है वे केवल भूखे रहने या काया कष्ट देने को बालतप और बाह्य तप ही कहते हैं। मोक्ष के लिए वह साधन तब तक नहीं माना जा सकता जब तक उसके साथ सम्यक्त्व भाव न हो। संयम और निर्जरा मोक्ष के प्रधान साधन है।

सम्पूर्ण ज्ञान के प्रकाश से, अज्ञान और मोह के त्याग से,
राग और द्वेष क्षय होने से आत्मा एकान्त सुखमय मोक्ष प्राप्त कर लेती है।

दीर्घ'तपस्वी महावीर नामक ग्रंथ में जैन दर्शन के महान् विद्वान् स्वर्गीय महापंडित सुखलाल जी संघवी ने लिखा है, तीस वर्ष का तरुण-क्षत्रिय पुत्र वर्धमान जब गृह त्याग करता है, तब उसका अन्तर और बाह्य दोनों जीवन एक दम बदल जाते हैं। वह सुकुमार राजपुत्र अपने हाथों केश का लुंचन करता है और तमाम वैभवों को छोड़कर एकाकी जीवन और लघुता स्वीकार करता है। उसके साथ ही यावज्जीवन सामायिक चरित्र (आजीवन समभाव से रहने का नियम) अंगीकार करता है और इसका सौलह आने पालन के लिए भीषण प्रतिज्ञा करता है-

"चाहे दैविक, मानुषिक" अथवा तिर्यंक् जातीय किसी भी प्रकार की विघ्न बाधाएँ क्यों न आवें मैं सबको बिना किसी दूसरे की मदद लिए समभाव से सहन करूंगा।

इस प्रतिज्ञा से कुमार के वीरत्व और उसके परिपूर्ण निर्वाह से उनके महान् वीरत्व का परिचय मिलता है। इसी से वह साधक जीवन में महावीर की ख्याति प्राप्त करता है। महावीर के साधना विषयक आचाराँग के प्राचीन और प्रामाणिक वर्णन से उनके जीवन वर्णन से, उनके जीवन की भिन्न-२ घटनाओं से तथा अब तक उनके नाम से प्रचलित सम्प्रदाय की विशेषता से यह जानना कठिन नही है कि महावीर को किस तत्व की साधना करनी थी, और उस साधना के लिए उन्होंने मुख्यता क्या साधन पसन्द किये थे। महावीर अहिंसा तत्व की साधना करना चाहते थे। उसके लिए संयम और तप, यह दोनों साधन उन्होंने पसन्द किये। उन्होंने यह विचार किया कि संसार में जो बलवान होता है, वह निर्बल के सुख और साधन , एक डाकू की तरह छीन लेता है। यह अपहरण करने की वृत्ति, अपने माने हुए सुख के राग से, खास करके कायिक सुखशीलता से पैदा होती है। यह वृति ही ऐसी है कि इससे शांति और समभाव का वायु मंडल कलुषित हुए बिना नहीं रहता है। प्रत्येक मनुष्य को अपना सुख और सुविधा, इतने कीमती मालूम होते हैं कि उसकी दृष्टि में दूसरे अनेक जीव-धारियों की सुविधा का कुछ मूल्य ही नहीं होता । इसलिए प्रत्येक मनुष्य यह प्रमाणित करने की कोशिश करता है कि जीव, जीव का भक्षण है- "जीवो जीवस्य जीवनम्"। निर्बल को बलवान का पोषण करके अपनी उपयोगिता सिद्ध करनी चाहिये। सुख के, राग के राग से ही बलवान लोग निर्बल प्राणियों के जीवन की आहुति देकर उसके द्वारा अपने परलोक का उत्कृष्ट मार्ग तैयार करने

"अहंकार विवेक को हर लेता है।"
Globe Travels
CONTACT FOR BETTER & FRIENDLIER SERVICE
11, Ho Chi Minh Sarani, Calcutta - 700 071 • Phone : 242-8181

का प्रयत्न करते है। इस प्रकार सुख की मिथ्या भावना और संकुचित वृति के ही कारण व्यक्तियों और समूहों में अन्तर बढ़ता है। शत्रुता की नीव पड़ती है। और इसके फलस्वरुप निर्बल बलवान होकर बदला लेने का निश्चय तथा प्रयत्न करते हैं और बदला लेते भी हैं। इस तरह हिंसा और प्रतिहिंसा का ऐसा मलीन वायुमंडल तैयार हो जाता है कि लोग संसार के सुख को स्वयं ही नर्क बना देते हैं। हिंसा के इस भयानक स्वरूप के विचार से महावीर ने अहिंसा तत्व मे ही समस्त धर्मों का, समस्त कर्तव्यों का प्राणिमात्र की शांति का मूल देखा। उन्हें स्पष्ट रूप से दिखाई दिया कि यदि अहिंसा तत्व सिद्ध किया जा सके तो ही जगत में सच्ची शांति फैलायी जा सकती है। यह विचार कर उन्होंने कायिक सुख की ममता को बैरभाव से रोकने के लिए तप प्रारम्भ किया, और अधीरज जैसे मानसिक दोष से होने वाली हिंसा को रोकने के लिए संयम का अवलम्बन किया।

संयम का सम्बन्ध मुख्यतः मन और वचन के साथ होने के कारण उसमें ध्यान और मौन होता है । महावीर के समस्त साधक जीवन में संयम और तप यही दो बातें मुख्य हैं और उन्हें सिद्ध करने के लिए उन्होंने कोई १२ वर्षों तक जो प्रयत्न किया और उसमें जिस तत्परता और अप्रमाद का परिचय दिया, वैसा आज तक तपस्या के इतिहास में किसी व्यक्ति ने दिया नहीं दिखाई देता। कितने ही लोग महावीर के तप को देह-दुःख और देहदमन कह कर उसकी अवमानना करते हैं। परन्तु यदि वे सत्य तथा न्याय के लिये महावीर के जीवन पर गहरा विचार करेंगे तो यह मालूम हुए बिना न रहेगा कि, महावीर का तप शुष्क देह दमन नहीं था वह संयम और तप दोनों पर समान रूप से जोर देते थे। वह जानते थे कि यदि तप के अभाव से सहनशीलता कम हुई तो दूसरों की सुख सुविधा की आहुति देकर अपनी सुख सुविधा बढ़ाने की लालसा बढेगी और उसका फल यह होगा कि संयम न रह पायेगा। इसी प्रकार संयम के अभाव में कोरा तप भी पराधीन प्राणी पर अनिच्छा पूर्वक आ पड़े देह कष्ट की तरह निरर्थक है।

ज्यों-ज्यों संयम और तप की उत्कृष्टता से महावीर अहिंसा तत्व के अधिकाधिक निकट पहुँचते गये, त्यों-त्यों उनकी गम्भीर शान्ति बढ़ने लगी और उसका प्रभाव आस पास के लोगो पर अपने आप होने लगा। मानस शास्त्र के नियम के अनुसार

जो मिथ्यादृष्टि और बुद्धिहीन होते हैं और जिन्होंने प्रगाढ़ कर्म बांधे है, वे गुरु के द्वारा नाना प्रकार से प्रतिपादित धर्म को सुन तो लेते हैं पर उसका आचरण नहीं करते हैं।

एक व्यक्ति के अन्दर बलवान होने वाली वृति का प्रभाव आस-पास के लोगों पर जाने-अनजाने में हुए बिना नहीं रहता।

भगवान महावीर आदि तीर्थंकरों ने संयम के साथ ही तप का महत्व बतलाया हैं। संयम के द्वारा आनेवाले पाप कर्मों का रुक जाना और तप रूप निर्जरा के द्वारा पूर्वकृत कर्मों का क्षय हो जाना, यही तो मोक्ष का मार्ग हैं। दशवैकालिक सूत्र के पहले वाक्य में ही धर्म उत्कृष्ट मंगल है। धर्म क्या है, अंहिसा, संयम और तप को ही धर्म बताया है। इच्छा रोकना ही तप की व्याख्या है। अर्थात् किसी प्रकार की इच्छा नहीं करना आत्मा में स्थिर-स्थित रह जाना ही तप हैं। इच्छा, सूक्ष्म राग-भाव है। और राग ही कर्मों की जड़ है। जब तक वीतरागता नहीं होती वहाँ तक केवल ज्ञान और मोक्ष नहीं हो सकता। मनुष्य का सबसे अधिक राग-भाव या ममत्व शरीर पर होता है। ममत्व के परिहार बिना समत्व नहीं आ सकता और 'सम' वही होता है, जो समत्व की अराधना व उपासना करता है। उत्तराध्ययन सूत्र में श्रमण का लक्षण बताते हुए समयाए समणो होई अर्थात् समता ही श्रमण का लक्षण है। जैन धर्म का प्राचीन नाम श्रमण धर्म है। सबसे मुख्य सिद्धान्त जो अहिंसा, अपरिग्रह, अनेकान्त माने जाते हैं इन तीनों का विकास समभाव से ही हुआ है। समस्त प्राणी एक समान है, कोई भी मरना व दुःख नहीं चाहता अतः किसी को भी दुःख न हो, यहीं अहिंसा है। जगत के सभी पदार्थ सभी के मित्र है केवल मेरा ही उन पर अधिकार नहीं है। अतः वस्तुओं और व्यक्तियों पर अपनापन या ममत्व बनाये रखना ही परिग्रह है।

इस मुर्च्छा भाव का नही होना ही अपरिग्रह है। सब प्राणी स्वतंत्र हैं उन सब के विचारों में भी भिन्नता रहना स्वाभाविक है अतः विचार - भेद में समन्वय स्थापित करना, एक ही वस्तु के देखने या भेद भाव में समन्वय स्थापित करना, एक ही वस्तु के देखने या समझने के अनेक पहलू हैं। अतः किसी एक ही बात का आग्रह न रखना ही अनेकान्त है। यही आत्म-शान्ति और विश्व-शांति के मुख्य आधार है। तीनों का प्रतिफल समता भाव से ही होता है। सहिष्णुता इसके लिए बहुत जरुरी है। उस सहिष्णुता का सर्वाधिक विकास ही तप है। ममत्व का कम हो जाना या मिट जाना संयम या तप है।

"मानव तू मुक्ति के लिए पुरुषार्थ कर"
APARAJITA BOYD
9/10, Sita Nath Bose Lane, Salkia, Howrah - 711 106
Phone : Resi : 665 3666 / 665 2272

जैन धर्म में बाह्य तप में साधना है पर अभ्यन्तर के साथ। अभ्यन्तर तपों में सबसे पहला विनय है। मुनि-जनों के प्रति आदर-भाव, श्द्धा एवं भक्ति ही विनय है दूसरा अभ्यन्तर तप है वैयावृति (अर्थात् सेवा) है जिनको जिस तरह की सेवा की आवश्यकता हो, उनकी उस तरह की सेवा करने में लगा रहना ही वैयावृत्य है।

तीसरा अभ्यन्तर तप है स्वाध्याय। स्वाध्याय अर्थात् अपने आपका चिन्तन। मैं कौन हूँ मेरा स्वभाव या स्वरूप क्या है, वर्तमान जीवन कैसा है, मेरा कर्त्तव्य क्या है। इन बातों पर मनन। फिर जीवन अभ्यन्तर तप होता है। ध्यान, मन को एकाग्र करके इष्ट या ध्येय में तल्लीन कर देना। आत्मभाव में स्थित हो जाना ही ध्यान है। फिर नम्बर आता है उत्सर्ग का। शरीर भाव का छूट जाना, मैं शरीर नहीं, मैं आत्मा हूं। शुद्ध बुद्ध और परमात्मा हूं। यहां भाव कायोत्सर्ग में शुद्ध किया जाता है। विनय के पहले कहीं प्रायश्चित का नाम अभ्यन्तर तप में माना हो इसका अर्थ है किए हुए पाप कार्यों के प्रति पश्चाताप करना, उसका परिष्कार करने के लिए दण्ड लेना। पाप की मन से निन्दा करना। इस तरह सभी अभ्यन्तर तप आत्म विशुद्धि के परम साधन हैं। इसलिए तप का अर्थ कर्मों को तपाना, आत्म विशुद्धि करना, कर्मों को आत्मा से हटाना-निर्जरा करवाना यही तप है।

भगवान महावीर ने जगत के समस्त जीवों का कल्याण करने के लिए जो मार्ग स्थापित किया इसमे तप को भी बड़ा महत्व दिया गया है। उपवास, आयंबिल, एकासना आदि । ब्राह्य तप तो जैन समाज में आज भी खूब प्रचलित है। लम्बे लम्बे उपवास भी खूब किए जाते है पर अभ्यन्तर तप का विशेष महत्व है।

आत्म-ज्ञान से जीव आदि भावों को जानता है, दर्शन से श्रद्धान करताहै।
चारित्र से नवीन कर्मों का आगमन रोकता है
और तप से निर्जरा करता है।

मगध और जैन संस्कृति

स्व. हीरालाल दूगड़

वर्तमान भारतीय संघ के बिहार राज्य के पटना कमिश्नरी (डिविजन) विशेषकर इसके पटना, गया, हजारीबाग और शाहबाद जिलों के बहुभाग में व्याप्त क्षेत्र इतिहास में मगध के नाम से प्रसिद्ध था। भारतवर्ष के प्राचीन इतिहास में मगध जनपद का नाम स्वर्णाक्षरों में अंकित है। जैनसाहित्य में वर्णित २५ आर्य देशों, महाभारत में उल्लिखित १६ जनपदों, भगवती सूत्र में १६ जनपदों और बुद्ध कालीन १६ जनपदों में मगध परिगणित है। जैन स्थानांगसूत्र एवं निशीथ सूत्र में उल्लिखित भारत की दस राजधानियों और बौद्ध दिग्घनिकाय के महासुदर्शन सुत्त में वर्णित छह महानगरियों में मगध की प्रसिद्ध राजधानी राजगृही सम्मिलित है।

सीमा और विस्तार-सामान्यतया मगध जनपद की उत्तरी सीमा गंगानदी बनाती थी। जिसके पार (उत्तर बिहार) में विदेह जनपद अवस्थित था। मिथिला और वैशाली उसकी प्रसिद्ध नगरियां थीं। मगध के पूर्व में अंगदेश था। इसकी राजधानी चंपा थी। चंपानदी इन दानों जनपदों को अलग करती थी। पड़ोसी अंगदेश के साथ मगध के कुछ ऐसे घनिष्ठ संबंध थे कि बहुधा **अंग-मगध का एक युगल के रूप में भी** उल्लेख हुआ है। मगध के दक्षिण मणि और मलय नाम के दो छोटे जनपद थे। पश्चिम में काशी जनपद, उत्तर पश्चिम में कौशल (अपर नाम कुणाल देश-राजधानी श्रावस्ती) और दक्षिण पश्चिम में वत्स (राजधानी कौशांबी) अवस्थित थे। वर्तमान मुंगेर मंडल का अधिकांश भाग भी मगध का उपांतभाग था। प्राचीन काल में ही यह क्षेत्र मगध माना जाता था। चंपेयजातक के अनुसार चंपा नदी अंग और मगध राज्य विभावजक-प्राकृतिक सीमा थी। पाल कालीन अभिलेखो से यह प्रमाणित होता है कि पुराने मुंगेर जिले के अंतर्गत था वर्तमान मुंगेर और दक्षिण वेगुसराय का प्रायःसारा क्षेत्र श्रीनगर (पटना का एक प्राचीन नाम) के अंतर्गत था। मुंगेर मंडल का प्रायःसारा क्षेत्र प्राचीन जैनस्थानों, स्मारकों और अवशेषों से भरा पड़ा है। सिकन्दरा अंचल के जनसंघडीह (जैनसंघडीह), जैनडीह, आचारडीह,

ज्ञानीजन पापों को अध्यात्म द्वारा समेंट लेते हैं।
KUMAR CHANDRA SINGH DUDHORIA
7, Camac Street. Calcutta - 700 017 • Phone : 242 5234/0329

कुमारकुंड, माहना, (माहण-ब्राह्मणकुंडपुर) परसंडा, रिसडीह, (ऋषभदत्त डीह) महादेव सिमरिया अनेक ग्राम प्राचीन जैनक्षेत्र हैं। जैन डीह, जैनसंघडीह, आचार्यडीह आदि ग्रामों के नाम से ही स्पष्ट है कि इस क्षेत्र में कभी जैनों के संघ, उनके आचार्य और धर्मस्थान विद्यमान थे। इसी अंचल में भगवान महावीर की जन्मभूमि कुंडग्राम या क्षत्रियकुंडनगर भी है। जहाँ भगवान के च्यवन (गर्भावतरण), जन्म दीक्षा कल्याणक हुए हैं। उसके आसपास के कई ग्रामों में प्राचीन जैनमन्दिर थे जिनका उल्लेख जैनयात्रीसंघों ने स्वलिखित तीर्थमालाओं में किया है। लच्छुआड़ के पूर्व महादेव-सिमरिया में पाँच जैनमन्दिर थे. जिनकी प्रतिमाएँ लोगों ने कुएँ में डाल दी थी. परसँडा (सिकन्दरा अंचल) में एक जिनप्रतिमा थी जिसे अन्य नाम से वहां की जनता पूजती है। सिकंदरा से पांच मील की दूरी पर भगवान महावीर की एक विशाल मूर्ति है जिसकी हथेली पर चक्र का चिन्ह है। इसके अतिरिक्त कुमारग्राम, बोब, मसोज आदि अन्य ग्रामों में भी जिनप्रतिमाएँ पाये जाने की सूचनाएं मिलती रहती हैं। जमुई अनुमंडल में इन्दपे, गृद्धेश्वर और महादेव-सिमरिया में छोटे आकार की कई जैन प्रतिमाएँ हैं। इन्दपेगढ़ के ध्वंसावशेष के समीप एक शिलापट्ट भी है जिस पर चौबीस तीर्थंकरों की कई आकार प्रकार की मूर्तियाँ उत्कीर्ण हैं।

महादेव सिमरिया में जिन पांच जैनमंदिरों का जैनयात्रियों की तीर्थमालाओं में उल्लेख पाया जाता है वे संभवतः वर्तमान में शिवमंदिर और उसके संलग्न मंदिर हैं। और उस समूह के प्रमुख मंदिर के नाम पर उस ग्राम का नाम महादेव-सिमरिया प्रसिद्ध हो गया होगा। यह ग्राम जमुई से सात मील पश्चिम में जमुई सिकंदरा जनपथ के समीप है। यहाँ छह देवालयों का एक समूह है और यह स्थान तीन ओर से विशाल पुष्करणियों से घिरा है। इस समूह के मुख्य मंदिर में शिवलिंग स्थापित है और शेष मंदिरों में लघु आकार की जैन अन्य प्रतिमाएं देखने को मिलती है। अनुश्रुति से स्पष्ट है कि सिमरिया के जैन तीर्थ पर शैवतीर्थ के आरोपण का कार्य गिद्धोर के राजा पूर्णमल ने किया और इसका औचित्य सिद्ध करने के लिए स्वप्न में शिव का आदेश प्राप्त करने की कथा गढ़ी गई। इस क्षेत्र में कुछ अन्य जैनस्थानों को विनष्ट करने में इस राजवंश का ही योगदान रहा हो तो आश्चर्य नहीं। ऐसा प्रतीत होता है कि मगध में जैनधर्म का पूर्णतः उच्छिन्न हो जाने से अनेक प्राचीन

जैनतीर्थ भी विस्मृत हो गये थे और मध्यकाल में उनका उद्धार किया गया है।

मगध की राजधानी राजगृही थी। यहां पांच पहाड़ियाँ है। उनके नाम १.विपुलगिरि, २.रत्नगिरि, ३. उदयगिरि, ४.स्वर्णगिरि एवं ५. वैभारवगिरि है। ई. पू. पांचवी शताब्दी में राजगृही से नवीन नगर पाटलीपुत्र (पटना) में राजधानी स्थानांतरित हो गयी थी। मगध एक ऐतिहसिक और महत्वपूर्ण जनपद होते हुए भी प्राचीन ब्राह्मणीय साहित्य एवं अनुश्रुतियों में मगध और मगधवासियों की निन्दा, भर्त्सना, तिरस्कार एवं उपेक्षा की ही गयी है। ऋगवेद में मगध का उल्लेख नहीं है। किन्तुं एक मंत्र (२/५३/१४) में कहा गया हैं।

किंते कृण्वन्ति कीकटेष गावो नाशिरं दुहेन तपन्ति धर्मम।
आं नो भर प्रमगन्धस्य वेदो नेचा शास्त्रं मधुवन रन्धयाः।।

अर्थात-वे क्या करते है कीकटों के देश में, वहां गायें पर्याप्त दूध नहीं देती और न उनका दूध (सोमयाग के लिए) सोमरस के साथ मिलता है। हे मधुवन तू प्रमगन्ध के सोमलता वाले देश को भलिभाँति जानता है।

यहां प्रमगन्ध से नेचा शाखा (नीच जाति अनार्य स्थान पर्व) की ओर संकेत है। यह याद रहे कि इस समय वैदिक आर्यों की आवास भूमि भी मध्यदेश था। (यहां मगध शब्द का उल्लेख नहीं है पर कीकटों का देश ही मगध हैं। मगध के प्रति हीनभावना। मगध मध्य प्रदेश के पूर्व में है।

२. **अथर्ववेद में (५/२३/१४) ज्वरनाशक देव से प्रार्थना की गयी है कि "गन्धारिभ्यो मृजवदभ्योऽअंगेभ्यो मगधेभ्यः प्रेषन जनमिवशेवो तकमन परिदद्भसि।।"**

अर्थात्- हे ज्वरनाशक-देव ! तुम तकमन (ज्वर) को गंधारियो मृजवन्तवासियों, अंगवासियों तथा मगधवासियों के पास उसी सरलता से भेजते हो जिस प्रकार कि व्यक्ति या कोप को एक स्थान से दूसरे स्थान पर भेजते हो।

३. **फिर अथर्ववेद में ही (१५/२/४५) में कहा हैं कि-**

.....प्रियंधाम भर्वात तस्य प्राच्यं दिशि ।।४।। श्रद्धापुंश्चलि मित्रोमागधो विज्ञान वासों हरुण्णीष रात्रि केशा हरिसौं प्रवर्तो कलमली कर्माणी।।५।।

"कर्म ही मनुष्य को छोटा बड़ा बनाता है।"
M/s. PARSAN BROTHERS
DIPLOMATIC & BONDED STORES SUPPLIERS
18-B, Sukeas Lane, Calcutta -1 • ✆ Office 242 3870 • Fax : 242 8621

अर्थात्- (व्रात्यों का) प्रियधाम प्राची दिशा, उसके पुंशचलि (रखैल) के श्रद्धा और मित्रमागध (मगधवासी) बतलाये गये है।

४. शतपथ ब्राह्मण (१।४।१०।) में मागधो को ब्राह्मण या वेदधर्म के बाहर बताया गया है।

५. कात्यायन (२२।४।२२) और लास्यायन (८।६।२८) के श्रोत सूत्रों में कहा गया है कि व्रात्यधन या पतित ब्राह्मण को अथवा मगध के ब्राह्मणों को दिया जाय।

६. मनुस्मृति आदि अनेक ब्राह्मणीय ग्रंथो में स्पष्ट लिखा है कि गांधार (भारत का उत्तर-पश्चिमी) सीमाप्रान्त, मध्यप्रदेश (मंजुवन-अंग और मगध) को वैदिक आर्य पाप भूमि कहते हैं और इन जनपदों में आने जाने का निषेध करते थे। यहां तक कह दिया गया था कि काशी में कोई कौवआ भी मरे तो सीधा बैकुण्ठ जाय और यदि (मगध) में मनुष्य भी मरे तो गधे की योनी में जन्म लेता है। मगधवासियों को अपज्वयन, अकर्म, अन्यव्रत, दर्वपिय आदि अपशब्दो से संबोधित किया जाता था। वहां के क्षत्रियों को घृणापूर्वक व्रात्य क्षत्रिय, दस, क्षत्रियबंधु, वृषल आदि संज्ञायें दी जाती थी। मध्यप्रदेशीय वेदिक आर्य उन्हे बहुत नीच समझते थे। इतना ही नहीं, मगध के ब्राह्मणों की अपेक्षां इन्हे अतिनिम्न कोटि का समझा जाता था। उनके विषय में धारणा थी कि ये लोग वेद और वेदानुमोदित याग-यज्ञ एवं कर्मकांडो को सहज ही छोड़ देते है।

श्रमण संस्कृति का केन्द्र मगध

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि भारत के प्राचीन सप्तखंडों में से प्राच्यखंड से सूचित भू-भाग जिस में मगध और उसके पड़ौसी विदेह, अंग, बंग, कलिंग तथा गांधार आदि जनपद जो उस समय विद्यमान थे, वे वैदिकआर्यों की सभ्यता, संस्कृति और धर्म से बहुत पीछे के समय तक अछूता रहते आये थे। न केवल यहां के निवासी वैदिकआर्य, ब्राह्मण एवं क्षत्रियों की संतति नहीं थे, परन्तु वे वातरशना, मुनि, अर्हत, व्रात्य, निर्ग्रंथ, श्रमण,तीर्थंकरों की परंपरा के उपासक तथा अनुयायी थे। जो इतिहासातीत ही नहीं अनुमानातीत-काल से यहां रहते आए है। उनकी सभ्यता भी नाग, यक्ष, वज्जि, लिच्छवी, ज्ञातृक, भल्ल, मल्ल, मोरिय, कोलिय, भंगी आदि अनार्य-अवैदिक तत्वों द्वारा संपोषित एवं पल्लवित हुई थी। जो ज्ञान, विज्ञान कला,

कौशल, शिल्पादि की दृष्टि से वैदिक आर्य सभ्यता की अपेक्षा श्रेष्टम एवं नागरिक सभ्यता महाउत्कृष्ट थी। चिरकाल तक नाग जाति का प्राधान्य रहने के कारण यह नाग सभ्यता भी कहलायी। प्राचीन युग की भाषामागधी या अर्द्धमागधी प्राकृत थी। जो यहां की लोक भाषा थी। जैन श्रमण तीर्थंकर का उपदेश इसी भाषा में होता है।

श्रमण संस्कृति की विशेषताएं

१. इस धार्मिक और सांस्कृतिक, परम्परा के प्रस्तोता जितेन्द्रिय होने के कारण जिन, जिनेन्द्र, या जिनेश्वर २. समस्त पूज्य गुणों से युक्त होने से अर्हत् ३. निरन्तर योगपूर्वक सदाचरण के मार्ग पर आरुढ़ होने के कारण वातरशना, ४. व्रत पूर्वक सदाचरण के मार्ग पर आरुढ़ होने के कारण व्रात्य, ५. समस्त अंतरंग और बहिरंग से मुक्त होने से निर्ग्रंथ, ६.सम्पूर्ण समत्व के साधक और उद्घघोषक होने के कारण समन, ७. स्वेच्छा एवं श्रमपूर्वक तप, त्याग, संयम का मार्ग अपनाने के कारण श्रमण, ८. संसार को दुःखरुप जान और मानकर उससे पार होने के लिये धर्मरुपी तीर्थ का उद्घाटन करने के कारण तीर्थंकर, ९. रागद्वेष रुपी आंतरिक शत्रुओं पर विजय पाने के कारण अरिहंत,१०. सब भव बीजांकुर क्षीण करने के कारण अरहंत ११. चार घातिय कर्मों को क्षय करके केवल ज्ञान, केवल दर्शन प्राप्त करने के कारण वीतराग सर्वज्ञ अर्हत कहलाते है।ये सब गुण जैनधर्म प्रवर्तक तीर्थंकरों के होते हैं।

१. यह अर्हतों की परम्परा अहिंसा पर आधारित कदाचरण निवृति प्रधान तथा सदाचार प्रवृतिप्रधान है। २. मनुष्य के बीच से किसी प्रकार का ऊंच नीच आदि भेदभाव इसे अभिष्ठ नहीं है, यहां तक कि क्षत्रिय-ब्राह्मण-वैश्य-शुद्र-वर्ण, स्त्री-पुरुष और नपुंसक तीनों में से कोई भी मानव शरीरधारी परमसाधना से मोंक्ष निर्वाण तक प्राप्त कर सकता है। ३. सभी प्राणियों का हित सम्पादन एवं सर्वोदयमार्ग का प्रयोजक है। ४. इसकी दृष्टि उदार, साहिष्णु, और अनेकान्तिक है, इससे कदाग्र दूर रहता है। ५. आज्ञा प्रधानता की अपेक्षा परीक्षा प्रधानता पर बल देता है। ६. स्वपुरुषार्थ द्वारा परमप्रातव्य की प्राप्ति इसका लक्ष्य है। ७.यह वेदों, वैदिक हिंसा और वैदिक क्रिया कांडो का विरोधी है। साधना और तपस्या के ये प्रयोग

"अनुकूलता में संसार है, प्रतिकूलता में मुक्ति है।"
M/s. C. H. Spinning & Weaving Mills Pvt. Ltd.
BOTHRA KA CHOWK, GANGA SAHAR, BIKANER

मगध में भी हुआ करते थ। इन्ही एतिहासिक कारणों से जैनों ने मगध को पुण्यभूमि माना और वैदिक ब्राह्मणों के लिए पाप भूमि हो गया।

महाभारतोत्तर काल के श्रमणधर्म पुनरुत्थान आन्दोलन का प्रधान केन्द्र मगध रहा और तदनन्तर लगभग भगवान महावीर के बाद दो हजार साल तक इस प्रदेश को जैनधर्म का मुख्यगढ़ रहने का सौभाग्य प्राप्त रहा। इसलिए कतिपय विद्वानों ने उक्त श्रमण जैन संस्कृति और इसके धर्म को मगधसंस्कृति और मगधधर्म भी नाम दिये है।

श्रमण परम्परा एवं मगध

जैनधर्म के अतिप्राचीन अर्द्धमागधी भाषा के आचारांग आगमों में मगह (मगध) का उल्लेख हैं। प्रज्ञापना सूत्र (१पद) सूत्रकृतांग और स्थानांगसूत्र में मगह को राजगृही का आर्य जनपद कहा है। आचारांगसूत्र में मगह और राजगृही का उल्लेख है। एक समय में तीर्थंकर महावीर साकेत में धर्मप्रचार कर रहे थे तो उन्होने कहा कि जैनो का चरित्र और ज्ञान मगध और विदेह में अक्षुण्ण रह सकता है। इन सब उदाहरणों से स्पष्ट है कि श्रमण संस्कृति में मगध को पवित्र माना जाता है उसे आर्यश्रेष्ठ लोगों का जनपद कहा गया है। मगध में जन, ज्ञान और आचार की रक्षा मानी है। उस समय मगध खूब उत्कर्ष में था और आर्य राज्यों और उपनिवेशों की स्थापनाएं भी हो चुकी थी। सुशासन और सुव्यवस्था से चोर डाकुओं से सुरक्षित और सामाजिक आचार की सुविधा थी।

हम लिख आए है कि अर्थवेद में व्रात्यों का प्रियधाम प्राचीदिशा को बताया है। यहां मगध का संकेत है। जैन श्रमण संस्कृति में व्रत धारक को व्रात्य कहा है। जैन निग्रन्थ व्रात्य थे। तपस्या से आत्मशोधन में विश्वास रखते थे। इसलिए उन्हें व्रात्य कहा गया है। ये व्रात्य मगध के अतिरिक्त भारतवर्ष के अन्य भागों में भी रहते थे तथा भारतवर्ष के बाहर के देशों में भी रहते थे।

वर्तमान अवसर्पिणी काल के प्रथम प्रस्तोता आदिदेव ऋषभ थे। जो स्वयंभू, महादेव, ब्रह्मा और प्रजापति कहलाये। ऋगवेद के कई मंत्रो में उनके प्रत्यक्ष या परोक्ष उल्लेख हैं। सिंधुघाटी की सभ्यता के अवशेषों में उस युग में उनकी पूजा के प्रचलन

जो रागद्वेष को जीतने वाले है, उन्होनें जो कहा हैं वही सर्वोत्तम मार्ग है, ऐसा जिसका अटल विश्वास है, वही सम्यग श्रद्धावान हैं।

के संकेत पाए जाते है। उनका च्यवन (गर्भावतरण) जन्म, दीक्षा, अयोध्या में, केवलज्ञान प्रयाग मे, मोक्ष (निर्वाण) कैलाश (अष्टापद) पर्वत पर हुआ। परन्तु उनका विहार प्राच्यखंड मे भी हुआ था। वे चौबीस तीर्थंकरों में से प्रथम थे। बाइसवें तीर्थकार अरिष्टनेमि का निर्वाण उज्जयंत (गिरनार) पर्वत पर सौराष्ट्र में हुआ था। शेष बाइस तीर्थंकरों का निर्वाण बिहार प्रांत मे हुआ। जिनमें से १२ वें तीर्थंकर वासपूज्य का निर्वाण चंपा (अंग जनपद) में और अन्तिम तीर्थंकर महावीर का निर्वाण पावापुरी (मगध जनपद) में, शेष बीस का सम्मेतशिखर पर्वत (पार्श्वनाथ पर्वत) पर निर्वाण (मगध जनपद में) हुआ।

नौवें तीर्थंकर सुविधिनाथ (पुष्पदंत) की चव, जन्म, दीक्षा भूमि काकुंदी थी। दसवें तीर्थंकर शीतलनाथ की च्यवन, जन्म, दीक्षा भूमि चंपा थी। बीसवें तीर्थंकार मुनिसुव्रतस्वामी की जन्म, दीक्षा,च्यवन भूमि राजगृही थी। अंतिम तीर्थकर महावीर की च्यवन, जन्म, दीक्षा, भूमि कुंडपुर (क्षत्रियकुंड) (मुंगेर जिला अन्तर्गत) थी।

तीर्थंकर महावीर की केवलज्ञान भूमि ऋजुकूलानदी के तटवर्ती जूंभिकाग्राम के बाहर थी। इनकी प्रथम देशना (धर्मोपदेश) चतुर्विधसंघ, साधु साध्वी, श्रावक, श्राविका तीर्थ की स्थापना, इंद्रभूति आदि ग्यारह ब्राह्मणों को दीक्षा देकर गणधरों की स्थापना, ये सब कार्य पावापुरी में हुए। ग्यारह गणधर राजगृही में वैभारगिरि पर निर्वाण पाए थे। इन्द्रभूति,अग्निभूति वायुभूति ये तीनों गणधर सगे भाई थे। इनका जन्म नालन्दा के निकट गुब्बरगांव (वर्तमान बड़गांव) में हुआ था। गणधर इन्द्रभूति को गुणाया (जिला नालन्दा) में केवलज्ञान हुआ था ये सब घटनाएं भी मगध जनपद में हुई थी।

मगध नरेश बिंबसार श्रेणिक भगवान महावीर का परमभक्त क्षायिक सम्यकत्वधारी अगली चौबीसी में पद्मनाभ नाम का होने वाला प्रथम तीर्थंकर था। भगवान महावीर के प्रथम पट्टधर गणधर सुधर्मास्वामी इनके शिष्य जम्बूस्वामी (दोनों केवली) की जन्मभूमि भी मगध ही थी । भगवान महावीर के आगमों की प्रथम सम्मिलित वाचना के लिए श्रमण संगति स्थूलभद्र की अध्यक्षता में मगध की राजधानी पटना (पाटलिपुत्र) में हुई,चौबीसों तीर्थंकर तथा उनके श्रमण-श्रमणियां मगध में विचरे। भगवान महावीर के उपरांत काल में भी श्रमण-श्रमणियों का इस प्रदेश में सतत

"त्यागी आचारवान होता है"
Abhay Chand Bothra
PHONE : RESI 298-4729 / 29-8755

विहार (आना- जाना) होते रहने से यह प्रदेश विहार नाम से प्रसिद्ध हुआ। प्रभु महावीर ने अपनी दीक्षा के बयालीस वर्षो में से चौदह चौमासे राजगृही में किये। दीक्षाकाल के बयालीस वर्षों मे से अधिक समय मगध मे ही व्यतीत किये।

जैनधर्म एवं मगध

मगध के शिशुनाग- वंशी बिंबसार श्रेणिक, अजातशत्रु (कोणिक) सिद्धार्थ. नन्दीवर्धन, महानन्दी आदि राजवंशी और मौर्यवंशी सभी सम्राट व्रात्यक्षत्रिय थे। ये सब भगवान महावीर के अनुयायी तथा प्रबलपोषक थे। उनके अभयकुमार आदि शाबटायन, राक्षस और चाणक्य महामंत्री भी मगधनिवासी थे और जैनधर्म के अनुयायी थे। पूण मध्यकाल में जैनों को मगध छोड़ना पड़ा।

किन्तु जैनों ने अपनी पुण्यभूमि मगध को कभी विस्मृत नहीं किया। इसका चप्पा-चप्पा जैनों के सांस्कृतिक इतिहास से रंगा है। राजगृही, पंचपहाड़ी,पावापुरी, बड़गांव, क्षत्रियकुंड, ब्राह्मणकुंड (कुंडपुर) काकन्दी, गया, गोरथगिरि (चराचर पर्वत) जंभीयग्राम, भद्दीय, गुणावां, नवादा, बिहारशरीफ सम्मेतशिखर, पाटलिपुत्र (पटना) महसारनगर, पचारपहाड़,श्रावकपर्वत आदि अनेकों स्थानों में प्राचीन एवं मध्यकालीन जैन पुरातत्व अवशेष जिन मंदिर, जिनतीर्थ, जिनप्रतिमाएं पवित्रस्मारक आदि प्राप्त हैं। इनमें अधिकांश स्थल तीर्थक्षेत्रों के रुप में पूज्यनीय है। भारत के कोने-कोने से प्रतिवर्ष लाखों जैनयात्री चिरकाल से मगध के इन तीर्थस्थानों की यात्रा करने आते रहते है।

संक्षेप में मगधदेश जैनधर्म और जैनसंस्कृति के साथ अत्यन्त प्राचीन काल से ही अटूट घनिष्ठ संबंध है। एक को प्रथक करके दूसरे के विषय में सोचा समझाही नहीं जा सकता।

मगध का अस्तित्व और उसका इतिहास, उसकी मगधसंस्कृति, श्रमणपरंपरा, अर्द्धमागधी प्राकृतआगम, साहित्यपंचागी, जैनधर्म के स्थापत्य और इतिहास के अभिन्न अंग है। इन दोनो के अभ्युदय और उत्थान एवं पतन ही अन्योन्याश्रित रहे हैं। मगध ने यदि जैनधर्म को पोषण दिया है और उसका वर्तमान इतिहास दिया है तो जैनधर्म ने भी मगध को सर्वतोमुखी उत्कर्ष साधन दिया है और उसे विश्वविश्रुत बना दिया है।

जिस प्रकार तिमिर का नाश करने वाला उदीयमान सूर्य तेज से जाज्वल्यमान प्रतीत होता है
उसी प्रकार बहुश्रुतज्ञानी तप की प्रभा से उज्जवल प्रतीत होता है।

वैशाली गंणतंत्र

आज से लगभग २६सौ वर्ष पहले वैशालीनगर सभी प्रकार की सुविधाओं से सम्पन्न था जो नौ मील की परिधि में बसा हुआ था । सुन्दर चैत्यों, तालों तथा बाग-बगीचों से परिपूर्ण था। नगर की बहुत ही सुव्यवस्थित ढंग से तीन भागों में रचना की गई थी। पहले भाग में स्वर्णकलशों से युक्त सात हजार घर थे। दूसरे भाग में चांदी के कलशों से चौदह हजार घर थे। तीसरे भाग में तांबे के कलशों से युक्त २१ हजार घर थे। इन तीनों भागों में क्रमशः उत्तम, मध्यम और निम्न वर्ग के लोग अपनी स्थिति के अनुसार रहते थे। उस वैशाली की जनसंख्या १ लाख ६४ हजार थी । (प्रति घर में लगभग चार, जनसंख्या) इस विभाजन के आधार पर यहां का समाज भी तीन वर्गों में विभाजित था। इस नगर की सुन्दरता का बखान बुद्धदेव अपने शिष्यों से करते हुए बार- बार यहां आने की बात कहते थे। यह वैशाली विदेह गणतंत्र की राजधानी थी।

विदेह भारत के तत्कालीन गणतंत्र राज्यों में से एक प्रधान शक्तिशाली राज्य था इस गणतंत्र के महाराजा चेटक लिच्छिवी जाति के क्षत्रिय थे।

तीर्थंकर भगवान महावीर के वंश के साथ चेटक का संबंध

तीर्थंकर भगवान की माता रानी त्रिशला चेटक की बहन थी। सबसे प्राचीन जैनागम आवश्यक चुर्णि में इसका उल्लेख मिलता है। विशाला (त्रिशला) के बड़े पुत्र (महावीर के बड़े भाई) नन्दीवर्धन की पत्नी ज्येष्ठा चेटक की पुत्री थी । जैनागमों में सबसे प्राचीन एवं प्रथम आचारांग सूत्र में भगवान महावीर की कुछ जीवनी मिलती है। उसमें एक स्थान पर महावीर की माता का एक नाम "विदेहदिन्ना" भी आया है । अर्थात महावीर की माता के तीन नाम **त्रिशला, विदेह- दिन्ना और प्रियकारिणी** थे। भगवान का भी एक नाम विदेहदिन्न है। अर्थात- विदेहदिन्ना त्रिशला का पुत्र विदेहदिन्न- वर्धमान महावीर थे। इस प्रकार त्रिशला विदेह की कन्या महाराजा चेटक की बहन थी। कुंडपुर के राजा सिद्धार्थ चेटक के बहनोई थे। नन्दीवर्धन एवं वर्धमान महावीर त्रिशला और सिद्धार्थ के पुत्र थे और महाराजा चेटक के भानजे थे। नन्दीवर्धन को चेटक की बेटी ज्येष्ठा-ब्याही थी । अतः नन्दीवर्धन महाराजा चेटक के जवाँई (दामाद) भी थे।

"आत्मा ही सुख दुःख का कर्त्ता है"
JAYANTILAL & CO.
20, Armenian Street, Calcutta - 700 001
Phone : 25 7927/6734/3816 • Resi - 400440

बौद्ध साहित्य में वैशाली और उस पर आधिपत्य रखने वाली लिच्छिवी जाति का बहुत कुछ वर्णन तो मिलता है किन्तु इस जनपद और समाज पर सर्वोपरि अधिकार रखने वाले किसी खास व्यक्ति का नाम नहीं मिलता। पर यह वर्णन तो मिलता है कि यह नगरी वज्जि (वृजि) संघ गणतंत्र की राजधानी वैशाली थी। जैनग्रंथों के अनुसार वैशाली गणतंत्र के राजाओं द्वारा निर्वाचित महाराजा चेटक थे। वह भगवान महावीर का मामा था। भगवान महावीर से पहले चेटक तेईसवें तीर्थंकर भगवान पार्श्वनाथ की परंपरा का अनुयायी था। पहले बुद्ध ने तीर्थंकर पार्श्वनाथ की परंपरा में दीक्षा ली थी और कठोर तपस्या की थी पर यह इससे बर्दाश्त नही हुई इसलिए इस परंपरा का त्याग कर उन्होनें अपना मध्यममार्ग का पंथ स्थापित किया जो आज विश्व में बुद्धधर्म के नाम से विख्यात है।

महाराज चेटक बाद में भगवान महावीर का अनुयायी होकर दृढ़ जैनधर्मी परमार्हत श्रावक बना।

भारत में उस समय अनेक गणतंत्र राज्य थे। परन्तु वैशाली राज्य का इतिहास तथा कार्यप्रणाली का विस्तृत वर्णन ग्रंथों से मिलता है संभवतः इसी कारण से श्री जैसवाल ने इस गणतंत्र को विवरणयुक्त गणराज्य (Recorded Republic) शब्द से संबोधित किया है। क्योकि अधिकांश गणराज्यो का अनुमान कुछ सिक्कों या मुद्राओ से अथवा पाणनीय-व्याकरण के कुछ सूत्रों से या कुछ उपलब्ध संकेतो से किया गया है। इसी कारण विद्वान लेखक ने इसे प्राचीनतम गणतंत्र घोषित किया है। जिसके लिखित साक्ष्य हमें प्राप्त है और जिसकी कार्यप्रणाली की झांकी हमें बुद्ध के अनेक संवादो से मिलती है।

वज्जि (वृजि) एक महासंघ का नाम है। जिसके अंग थे-१.ज्ञातृक २. विदेह ३. लिच्छिवी ४.वृजि ५. उग्र ६. भोग ७.कौरव एवं ८. इक्ष्वाकु। इनमें से मुख्य थे वृजि और लिच्छिवी। बुद्ध दर्शन और भारतीय भूगोल के अधिकारी विद्वान श्री भरतसिंह उपाध्याय ने अपने ग्रंथ बुद्धकालीन भारतीय भूगोल पृष्ठ ३८३-८४ में अपना मत प्रकट किया है कि वस्तुतः लिच्छिवी और वज्जियों में भेद करना कठिन है। क्योकिं वज्जि न केवल एक जाति के थे परन्तु लिच्छिवी आदि गणतंत्रों को मिलाकर उनका

आत्मा के साथ ही युद्ध कर, बाहरी दुश्मनों के साथ युद्ध करने से तुझे क्या लाभ?
आत्मा को आत्मा के द्वारा ही जीत कर मनुष्य सच्चा सुख पा सकता है।

सामान्य अभिधान वज्जि था। वज्जि आर्यों के छः कुल थे। यथा १.उग्र २.भोग ३.राजिन्य ४.इश्वाकु ५.ज्ञातृ और ६.कौरव अर्थात् वज्जि महासंघ के आठ अंगो एवं आर्यो के छह कुलों पर विचार करने से भी ज्ञात होता है कि १.उग्र २.भोग ३.ज्ञातृक ४.कौरव तथा ५.ईक्ष्वाकु नाम दोनों में हैं परन्तु विदेह, लिच्छिवी और वज्जि इन तीनों अंगो का राजन्य में समुचय रुप स्वीकार किया गया है। इससे यह स्पष्ट है कि लिच्छिवी जाति के राजा चेटक और ज्ञातृ जाति के राजा सिद्धार्थ (महावीर के पिता) भिन्न भिन्न क्षत्रिय जातियों के थे।

परन्तु अलग जाति के रुप में वज्जियों का उल्लेख पाणिनी ने किया है और कौटिल्य ने भी ज्ञातृकों को लिच्छिवियों से अलग माना है। (युवांगचांग चीनी बौद्धयात्री) ने भी वज्जि देश और वैशाली में भेद किया है। उसने लिच्छिवियों को व्रात्य लिखा है। हम लिख आए है कि व्रात्य जैन धर्मानुयायी को कहा जाता था।

कम्बोज, सुराष्ट्र आदि क्षत्रियों की श्रेणियां कृषि व्यापार तथा शस्त्रों द्वारा जीवनयापन करते थे और लिच्छिवी, वृजि, मल्लक, भद्रक, कुरु, पाचाल एवं ज्ञातृ आदि श्रेणियां राजा के समान जीवन बिताती थीं।

रामायण और विष्णुपुराण के अनुसार वैशालीनगरी की स्थापना इक्ष्वाकु-पुत्र विशाल द्वारा की गई थी। इसलिए यह विशाला नाम से प्रसिद्ध हुई। वैशाली धन धान्य से समृद्ध तथा जन-संकुल नगरी थी। बौद्ध और जैन दोनों धर्मों के इतिहास से घनिष्ठ संबंध रहा है। पांच सौ वर्ष ईसा पूर्व में भगवान महावीर और बुद्धदेव इन दोनों की पवित्र स्मृतियां वैशाली से निहित हैं।

जैनाचार्य हेमचन्द्र सूरि विशष्टि शलाका पुरुष चरित्र पर्व १० श्लोक १८४-८५ में कहा गया है कि धन्य एवं समृद्धियों से भरपुर वैशाली नगरी थी। श्री रे चौधरी के शब्दों में–"कट्टर हिन्दुधर्म के प्रति उन क्षत्रियों का मैत्रीभाव प्रकट नहीं होता। इसके विपरीत ये क्षत्रिय जैन, बुद्ध जैसे अब्राह्मण परंपराओं के प्रबल पोषक थे। मनुस्मृति के अनुसार वे व्रात्य राजन्य थे। सुविदित है व्रात्य का अर्थ यहाँ जैन है क्योकिं जैन साधु एवं श्रावक तप, अहिंसा,संयम (अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह) व्रतों का पालन करते हैं।"

"आत्मा ही अपना मित्र व शत्रु है"
HARAKH CHAND NAHATA
21, ANAND LOK, NEW DELHI - 110 049 • PHONE : 6461075

महावीर का तत्व दर्शन

श्रीचन्दचोरड़िया, न्यायतीर्थ (द्वय)

सामंतभद्राचार्य ने भगवान् महावीर की स्तुति करते हुए कहा है - देवागम मुभैया दि चामरादयः विभूतयः। मायाष्वपि दृश्यन्ते नातस्तवमपि ने महान।। स त्वमेवाससिनिर्दोषो युक्ति शास्त्र विरोधिवाक् अविरोधो यदिष्ट ते प्रसिद्धेन नो वाध्यते ।। आप्तीमीमांसा श्लोक १,२ अर्थात् हे भगवान्! आपके पास देवों का आगमन होता था, छत्र चामर की विभूति थी । इन कारणों से आप महान् नहीं थे। देवों का आगमन मायावी पुरुष के पास भी हो सकता है परन्तु महान आप इसलिये हैं कि आपकी वाणी में यथार्थवाद था, आप अन्यथा भाषी नही थे अन्यथा भाषी वह होता है जो रागद्वेष से संयुक्त हो किन्तु आप रागादि दोषों से रहित थे। वस्तुतः निर्दोष पुरुष द्वारा निर्मित सिद्धांत अबाध्य है। भगवान महावीर ने अहिंसा की परम् ज्योति से मानवता के विकास का मार्ग आलोकित किया था।

व्यक्ति जन्म लेता है, चला जाता है, दुनिया पीछे उसे आंका करती है, वह उसका काम है।उच्च विचार, पवित्र भावना, विश्व मैत्री के सिद्धान्त जिस व्यक्ति मे होते हैं वह व्यक्ति वस्तुतः महान् है। भगवान महावीर यथार्थवादी थे और यथावादी तथा कारी थे। ऐसे महापुरुषों को वीतरागी,आप्त कहा जाता है। तथा उनकी वाणी को आप्तवाणी या आर्षवाणी कहा जाता है,वस्तुतः उनकी वाणी ही आगम है, हेमचन्द्राचार्य, अकलंकदेव आदि आचार्यों ने यथार्थवाद को अप्रतिद्वन्द्वी गुण माना है।

आगम सिद्धान्त का यह नियम है कि तीर्थंकर छद्मस्थ काल में न किसी को उपदेश देते है, न किसी को दीक्षित करते हैं। उस काल में मौन इसलिए रहे कि अयथार्थ बात मुंह से न निकले। तीर्थंकर किसी का आधार लेकर उपदेश नही देते हैं सुधर्मा स्वामी जंबू स्वामी को कहते हैं कि हे जंबू, जैसा मैने भगवान महावीर से सुना है वैसा ही मैं तुमको कहता हूँ। उपदेश का अधिकारी वही है जो रागद्वेष रहित हो अर्थात् वीतरागी हो। छद्मस्थ उपदेश का अधिकारी तभी कहा जा सकता है जबकि वह वीतराग वाणी का आधार लेकर किसी विषय का प्रतिपादन करता है

जिस प्रकार धागे में पिरोई सुई गिर जाने पर भी गुम नही होती है उसी प्रकार ज्ञानरुप धागे से युक्त आत्मा संसार में कहीं भटकती नहीं अर्थात् विनाश को प्राप्त नहीं होती।

अतः छद्मस्थ अवस्था में १२ वर्ष ६ मास १५ दिन की दीक्षा में भगवान् इसलिए नहीं बोले कि कोई अयथार्थ बात का कथन न हो जाय। इस मौन साधना का रहस्य जनता ने समझा - पहले बनो, फिर बनाओ।

भगवान सर्वज्ञ हुए, तीर्थंकर हुए। उन्होंने यथार्थवाद को जनता के सामने रखा जो अहिंसा के रूप में विश्व के सामने आया । हिंसा को असमाधि और अहिंसा को समाधि मानकर उन्होंने आम जनता के सामने उपदेश दिया । छल कपट से तपे जाने वाले तप को गर्भ का मूल बतलाया।

वे ज्ञानवादी होते हुए भी शुष्क ज्ञान को अत्राण मानने वाले थे। जो पाप कर्म से विरत नहीं होता वह कोरे ज्ञान भार से दबा रहता है। उन्होंने श्रद्धा व सम्यग् दर्शन सत्य के आग्रह को आत्म-विकास की भूमिका में सबके पहले स्थान दिया। जब तक वह हृदय में नही पनपता तब तक समता या वीतरागता भाव का आग्रह नहीं हो सकता । मानसिक अहिंसा के लिये अनेकांत दृष्टि और वाचिक अहिंसा के लिए स्याद्वाद उनकी गतिविधि के श्रोत बने। उन्होंने कहा- सब जीव जीना चाहते हैं, दुःख कोई नहीं चाहता अतः सब जीवों को आत्म- तुल्य समझो । आवश्यक हिंसा भी हिंसा है, जीवन की कमजोरी है जो आवश्यक हिंसा को हिंसा नही मानता वह मिथ्यादृष्टि है। जिसे तू मारना चाहता है वह तू ही है। भगवान का दृष्टि - बिन्दु वीतराग दशा में केन्द्रित था। 'समियाए धम्माए' अर्थात समता में धर्म है। लाभ होने पर आत्मा फूले नहीं। अलाभ होने पर आत्मा डिगे नहीं, वह साम्य है तत्वतः अहिंसक साम्य आत्मापरक होता है।

जातिवाद को लेकर ऊंच-नीच की भेद रेखा खींचना उनको पसन्द नहीं था। उनका समतावाद स्पृश्यता का विरोधी था। उच्चता का मद नीचता लाने वाला है। प्रज्ञापना पद ३३ में जुगुप्सा को मोहनीय कर्म का उदय कहा है। चांडाल कुल में उत्पन्न होकर भी हरिकेशी मुनि ने तप, संयम और अहिंसा की उत्कृष्ट साधना की । भगवान् ने उत्तराध्ययन सूत्र में उन्हे महान् कहा है। वास्तव में तप, संयम और अहिंसा में ही जाति प्रधान कहना चाहिए। सुख- दुःख की कर्ता आत्मा है। ईश्वर द्वारा सुख दुःख की कल्पना का आपने विरोध किया। अच्छी क्रिया अच्छा फल देती है- बुरी क्रिया बुरा फल।

"कोरा ज्ञान या कोरी क्रिया मोंक्ष नहीं लाती"
D. SANDEEP & CO.
78, J. S. S. Road,Ratna Deep,
Opera House, Mumbai

आचारांग में भगवान ने कहा- 'पुरिसा तुममेव मितं किं बहिया मितमिच्छसी' अर्थात तू ही तेरा मित्र है, बाहर क्या खोजता है। हे प्राणी! अपनी आत्मा का दमन कर। जो एक मनरूपी घोड़े को जीत लेता है वह पाँचों इन्द्रियों के विषय विकार तथा चार कषायों को भी जीत लेता है। तू अपने आप पर काबू पा, अपने मन को जीत फिर शीघ्र ही सर्व दुःखों से छूट जायेगा। भगवान् की दृष्टि सम्पूर्णतः आध्यात्मिक थी। भगवान महावीर की सारी आचार व्यवस्था आत्मविकास के लिए ही है । आपने आत्म-केन्द्रित होने की शिक्षा दी। भगवान बुद्ध की दृष्टि में मन ही पाप का हेतु था परन्तु भगवान् महावीर शरीर-काय और वचन को भी उसका हेतु मानते थे। भगवान् बुद्ध ने उपवास आदि ब्राह्य तप पर खास जोर नहीं दिया परन्तु भगवान् महावीर ने उपवास और ध्यान को भी समरूप से पकड़ा। जैन दृष्टि में मन, वचन काय का विरोध ध्यान माना जाता है। ध्यान को ऐकान्तिक महत्व देते हुए उन्होंने उपवास की उपेक्षा नहीं की। यह प्रमाण है कि भगवान की साधना और उपवास दोनों चलते थे। भगवान ने अनशन, उपवास आदि ब्राह्य तथा ध्यान, स्वाध्याय आदि को आन्तरिक तप कहा है। उनका कोई उपवास ऐसा नही है, जिसमें ध्यान की विशेष प्रकिया न चली हो। उनकी स्तुति में कहा गया है- वे अनुत्तर ध्यान के आराधक थे। ध्यान और उपवास की तुलना करते हुए कहा है कि सात लव के विशिष्ट ध्यान की तुलना दो दिन के उपवास से होती है। भगवान महावीर ने इसी ध्यान योग से अपने आपको प्राप्त किया था। भगवान महावीर की अतरंग साधना ने अहिंसा दी और तीर्थ प्रवर्तन ने अनुशासन दिया। जिस अनुशासन से हिंसा का निरोध न हो सके वह वास्तव में अनुशासन नही हैं। गणाधिपति तुलसी ने ठीक ही कहा है आत्मानुशान नहीं तो फिर साधक कैसा। मार्ग सही रहे, दिग्मूढ़ न बने इसलिए अनुशासन चाहिए।

भगवान ने आचारंग में कहा है कि यदि कोई तत्व समझ में नहीं आये तो आग्रह नहीं करना चाहिए। सम्यग् मानते हुए को असम्यग् भी सम्यग् होता है। यहां उन्होंने सत्य आग्रह का निर्देश दिया । साधक को मन में यह धार लेना चाहिए कि वीतरागियों ने जो कहा है वह सत्य है, निःशुल्क है। परन्तु मेरी बुद्धि तुच्छ होने से यह तत्व समझ में नही आता। भगवान ने सम्यग् दृष्टि की ओर संकेत करते हुए कहा है

धार्मिक आचार के नियमों की
समीक्षा और मूल्यांकन प्रज्ञा के द्वारा करना चाहिए।

कि तुम स्वयं सत्य रूप बनकर सत्य को पकड़ो। असत्य रूप मे स्थिर होकर तुम कभी उसे प्राप्त नहीं कर सकते हो। अन्यथा भाषी वह होता है जो राग दोष से संयुक्त हो किन्तु आप रागद्वेषादि दोषों से रहित थे। वस्तुतः निर्दोष पुरुष द्वारा निर्मित सिद्धान्त बाध्य है। कहा है दोषावरणयो हानिर्नि शेषास्त्य सिशायिनात् क्वचितथा स्वेहतुभ्यो बहिरन्तर्मलक्षयः आप्त मीमांसा आ० २१३ भगवान् महावीर ने अहिंसा की परम ज्योति से मानवता के विकास का मार्ग आलोकित किया था। जो मूलभूत तत्वज्ञान और सत्य साक्षात्कार उपेक्षित होता है। उनको भगवान् महावीर ने युगरुपता दी। सत्य त्रिकाल बाधित एक होता है। उसकी देश, काल और उपाधियों से परे सदा एक रस होता है। देश, काल उसकी व्याख्याओं में यानि उसके शरीरों में भेद अवश्य होते है। भगवान ने आगमस्थल में कहा है कि जैसा मैंने कहा वैसा ही अनन्त तीर्थंकरों ने कहा। भगवान् महावीर की तरह सभी तीर्थंकर अहिंसा की अपूर्व साधना में संलग्न रहे। इसलिए उन्होंने कहा जो सत्य है वह मौन है और जो मौन है वह सत्य है। मध्यवर्ती बाईस तीर्थंकरों ने तथा पंच महाविदेह क्षेत्र के तीर्थकरों ने चातुकार्या धर्म की व्याख्या की तथा भगवान महावीर ने पुनः पंचयाम धर्म की स्थापना की । प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषदेव ने पंचयाम रूप धर्म का उपदेश दिया था। तत्वतः सभी तीर्थंकरो का उपदेश स्याद्वाद की दृष्टि से यथा -तथ्य था। मिथ्या उपदेश वह देता है जो राग- द्वेष मोह-सहित हो, परन्तु सभी तीर्थंकर दग्ध बीज की तरह इनका निर्मूल नाश कर देते हैं। अब यह देखना है कि इसमें मूल भित्ति क्या है?

उत्तराध्ययन सूत्र अ० २३ में गौतम केशी के सम्वाद में बड़ा ही रोचक विवेचन है। वहाँ संभाग में गौतम केशी स्वामी से मिलने का विचार करते हैं। परस्पर में उनमें विविध प्रकार की चर्चायें होती है। केशी स्वामी भगवान पार्श्वनाथ की परम्परा के साधु तथा गौतम स्वामी भगवान् महावीर के प्रथम गणधर थे। वहाँ प्रश्नोत्तर में यह कारण बताया गया कि प्रथम तीर्थंकर के साधु ऋजु-जड़ थे, इसलिये पंचयाम व्यवस्था की गई। ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह पृथक , पृथक महाव्रत माने गये। मध्यवर्ती बाईस तीर्थंकरों के साधु ऋजु-प्राज्ञ थे अतः चतुर्याम से काम चल गया अर्थात् उन्होंने ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह को एक ही शब्द वहिया दान

"दुःख सुख अपना किया होता है।"
NAHAR
5/1, Acharya Jagadish Chandra Bose Road
Calcutta - 700 020, Phone : 247 6874, Resi. : 244 3810

विरमण में संगृहीत कर लिया। भगवान महावीर के साधुओं को चक्र-जड़ कहा है। उसका अर्थ है हृदय से भी वक्र और समझाने पर भी कठिनता से समझने वाले। अतः भगवान महावीर ने युग परिवर्तन की एक सीमा को देखा। यदि चार महाव्रत की रूपरेखा को पांच महाव्रत के रूप में परिवर्तन किया जायेगा तो ठीक रहेगा। समय की गति में काफी अन्तर आ गया है। कुर्कीजन अधिक होंगे। इसका कोई गलत अर्थ न करले अतः उन्होने भगवान् ऋषभदेव का अनुसरण किया। अहिंसा आदि पाँच महाव्रतों की रूपरेखा को आम जनता के सामने रखा। यहाँ पर यह स्पष्ट कर देना उचित है कि भगवान् पार्श्वनाथ ने अहिंसा, सत्य, अस्तेय तथा अपग्रह इन चार महाव्रतों का उपदेश दिया पर ब्रह्मचर्य महाव्रत को क्यों नहीं विधान में रखा, यह एक बड़ा रहस्य है। समय की गति ठीक चल रही थी। ब्रह्मचर्य महाव्रत को अपरिग्रिह में समा विष्ट कर दिया। स्त्री परिग्रह में होती है अतः अब्रह्मचर्य रूप आश्रव परिग्रह आस्त्रव का एक रूपान्तर है। अतः स्पष्ट हो जाता है कि भगवान पार्श्वनाथ ने ब्रह्मचर्य को अपरिग्रह महाव्रत में समाविष्ट कर चार महाव्रतों का उपदेश दिया। जबकि भगवान महावीर ने ब्रह्मचर्य महाव्रत को अलग कर अहिंसादि पाँच महाव्रत को अलग रूप देना उचित समझा। भगवान महावीर ने द्रव्य, क्षेत्र, काल भाव को देखकर ब्रह्मचर्य महाव्रत को अलग रूप देना उचित समझा। सभी तीर्थकरों ने व्यक्ति की मुक्ति और शान्ति के लिए एक ही प्रकार के सत्य का साक्षात्कार किया है। और वह व्यापक मूल सत्य है, अहिंसा है। भगवान महावीर ने ज्यों साधना को आचार मूलक बतलाया त्यों आचार को अनुशासन मूलक बतलाकर संघ की समसूत्रता की नींव डाली–जिसमें आज भी आचार की क्षमता है।

भगवान जैसे तत्वदृष्टा थे वैसे दीर्घ तपस्वी और साधक थे। उन्हे शिष्य प्रिय नही थे साधना प्रिय थी। उनके प्रमुख श्रावक आनन्द को वाणिज्य ग्राम में ज्ञान उत्पन्न हुआ। उस समय में भगवान महावीर के जयेष्ठ शिष्य गौतम का आनन्द के घर पदार्पण हुआ। आनन्द ने भगवान गौतम को कहा कि मुझे अमुक-अमुक दिशा तक जानने वाला देखने वाला अवधि ज्ञान उत्पन्न हुआ है? गौतम ने कहा कि इतना बड़ा अवधि ज्ञान श्रावक को उत्पन्न नहीं होता, इसलिए तुम इस मिथ्या कथन की

जो लोग अपने-अपने मत की प्रशंसा और दूसरे की निन्दा करते हैं
तथा दूसरों के प्रति द्वेष भाव रखते हैं वे संसार में परिभ्रमण करते रहते हैं।

आलोचना करो। आनन्द ने प्रत्युत्तर में कहा कि क्या आलोचना सत्य वचन की भी होती है? कुछ समय विवाद चला। गौतम भगवान के निकट आये। भगवान महावीर ने गौतम से कहा कि आज तुम्हारा और आनन्द का परस्पर वादविवाद हुआ है।आनन्द ने जो कहा है वह सत्य है, तुमने मिथ्या आग्रह किया अतः तुम आनन्द के पास जाओ और उससे क्षमा याचना करो कि मैंने तुम्हारे साथ मिथ्या आग्रह किया है, हे आनन्द तुमने जो कहा था वह सत्य था। गौतम ने वैसा ही किया। इस दृष्टान्त से सिद्ध होता है कि इनको साधना से प्रेम था, परन्तु शिष्यों से मोह नहीं था। हे भगवान जिन कठिन दोषों को आपने नाना उपायों के द्वारा नाश कर दिया है हे प्रभो! आपके आगम के अतिरिक्त अन्य आगमों में हिंसा ही असार कर्मों का उपदेश है। वे आगम असर्वज्ञ के द्वारा कथित हैं। अतः आपके वचन रूप आगम ही सत्य है। हे भगवान जो वाणी अज्ञान अंधकार में फिरने वाले पुरुषों के अगोचर ऐसे आपको प्रगट करती है। उस चन्द्रमा की किरणों के समान स्वरूप और तर्क से पवित्र आपकी वाणी की हम पूजा करते हैं। देह दुःख महाफलम् यह सिद्धान्त स्वार्थी दुनियाँ को घूरता रहा। दूसरी ओर उन्होंने पौद्‌गलिक प्यास को बुझाने के लिए तपने वालों को कोसा। सत्य के आग्रह अथात् सम्यग्‌दर्शन को आत्म विकास की भूमिका में प्रथम स्थान दिया, इसके बिना मिथ्या आग्रह नष्ट नहीं हो सकता। मिथ्याग्रह नष्ट हुए बिना समता या वीतराग भाव का आग्रह नहीं हो सकता। तू ही तेरा मित्र है बाहर क्या सोचता है, सुख-दुख की कर्ता आत्मा है। संसार में यदि तुम सुखी होना चाहते हो तो तपस्या करो। सुकुमारता को छोड़ो। दुराचारों का अन्त करो दुःख स्वतः नष्ट हो जायेगा। आखिर दुःख स्वयं कृत ही तो है। आत्म-दमन वीरता का चिन्ह है। भगवान महावीर ने आत्म-दर्शन से होने वाले विनय को आत्म-साक्षात्कार का अनन्य कारण माना है। विनय को धर्म का मूल बतलाया।

भगवान महावीर योग के सृष्टा थे; योग का स्रोत वहीं से निकला। हठ योग बाह्य चीज है। इसका आत्म-साधना में कोई खास मूल्य नहीं है। भगवान महावीर की सारी तपस्या ध्यान से अनुस्यूत थी। ध्यान योगी के लिए अत्यन्त उपादेय है। यह एकाग्रता का बीज मंत्र भी है। ध्यान से यहाँ धर्मध्यान व शुद्ध ध्यान ही अभिलक्षित है। चतुर्दश के गुणस्थान में ध्यान से शेष चार कर्मों से पांच लघु अक्षर या मात्रस्थिति में महानिर्जरा होती है । योगी की दृष्टि, अनित्यभाव परक होनी चाहिये । माता

"जो हिंसात्मक प्रवृति से विलग हैं, वही बुद्ध ज्ञानी हैं।"
RINA MAHENDRA BHANDARI
13, Sahakar 'B' Road, Church Gate, Mumbai- 20
Tel : (R) 285-4970 (O) 285-3762/65/2041792

पिता, स्त्री, बन्धु आदि मेरी रक्षा किसी भी प्रकार नहीं कर सकते। आचारंग में योग की साधना में सफलता प्राप्ति के लिये समता पर भी अधिक जोर दिया है। साधु की जो भी क्रिया (निरवद्य क्रिया) है वह योग ही है, उसका जीवन सर्वथा योगमय है। आज इसी समतामय योग की आवश्यकता है। इस प्रकार भगवान महावीर जैन धर्म का प्रचार करते रहे। जनता की भाषा में जनता को उपदेश दिया । इससे जननायक कहलाये। उनके महान् जीवन पर दृष्टि डालते -डालते मनुष्य का जीवन सिर ऊँचा हो जाता है और अन्तर भाव श्रद्धा से झुक जाते है। आज भगवान् महावीर हमारे सामने नहीं हैं, किन्तु उनकी वाणी हमारे सामने है अतः हमारा कर्तव्य है कि उनकी वाणी का प्रचार अधिक से अधिक करे।

मेरी आत्मा ही वैतरणी नदी हैं और आत्मा ही कूटशाल्मली वृक्ष हैं।
आत्मा ही काम-दूधा-धेनु है और आत्मा ही नन्दन वन है।

एक विदेशी के बढ़ते कदम

माँसाहार से शाकाहार की ओर

भारत में विशेष कर जैन कुल में उत्पन्न लोग जो पश्चिमी सभ्यता की चकाचौंध से प्रभावित होकर शाकाहार से मांसाहार की ओर प्रेरित हो रहे है जब कि आज पश्चिम के बुद्धजीवी अपनी मांसाहारी प्रवृतियों का त्याग कर शाकाहारी बनने की तरफ अपने कदम बढ़ा रहे हैं। और सफल हुए हैं। इन्हीं में एक माईकेल टोबायस (Michal Tobayas) है जिन्होंने मांसाहार का त्याग कर शाकाहार को अपनाया है।

मुम्बई के पंचतारक (Five Star) होटल के अन्दर बुक स्टाल ने मन को आकर्षित करने वाली एक किताब रखी हुई है जिसके शीर्षक को देख कर ही मन में उसको पढ़ने का कौतुहल होता है। यह किताब अमेरिका के हालीवुड के फिल्म निर्माता दिग्दर्शक तथा व्यवसायी माईकेल टोबायस द्वारा लिखी गयी हैं। इस किताब का नाम (India Twenty Four Hours) है। माईकेल का फिल्मी व्यक्तित्व होने के कारण ऐसा प्रतीत होता है कि ये किताब फिल्म सम्बन्धी विषयों पर होगी परन्तु भारतीयता से प्रभावित माईकेल ने भारत में चौबीस घंटे किस प्रकार व्यतीत किए इसी पर अपने विषयों का प्रतिपादन इस किताब में किया था उनकी कुछ अन्य किताबें भी हैं जैसे:

Heaven of Relegious Himalaya
World of Jainism
Life of Mahavir
Race or Regions

फिल्मी चकाचौंध में रहते हुए भी माईकल स्वयं को जैनी कहते हैं और प्रतिदिन सामायिक भी करते हैं। वो जैनी कैसे बने इसके बारे में स्वंय इस प्रकार बताते है-कई वर्षों पहले वो आध्यात्मिक ज्ञान के अध्ययन के लिये भारत आये थे। सब धार्मिक स्थानों में गये। हिमालय की भी यात्रा की। वहीं पर किसी सन्यासी ने उन्हे जैन धर्म के विषय में बताया। एक दिन महाराष्ट्र में घूमते-घूमते एक जैन मन्दिर को देख कर जब उसके अन्दर प्रवेश करने गए तो उन्हें द्वार पर रोक कर घड़ी में लगी चमड़े की बैल्ट उतार-कर जाने को कहा जब उन्होंने इसका

"जिसे तुम मारना चाहते हो वह तुम ही हो।"
BOYD SMITHS PVT. LTD.
B.-3/5, Gillander House
8, Netaji Subhash Road, Calcutta - 700 001
Phone : Off. 220-8105/2139, Resi. 241 0629/0319

कारण पूछा तो पता चला कि मरे हुए मुर्दे का चमड़ा अन्दर ले जाना वर्जित है। इस बात की बहुत ही गहरी छाप माइकेल के अन्तर में पड़ी। उनके मन में ये विचार आया कि जिस धर्म में मरे हुए मुर्दे का इतना ख्याल है तो उस धर्म में अवश्य ही कोई विशेष रहस्य होगा। उसी दिन से उन्होंने चमड़े की वस्तु का त्याग कर दिया और जैन धर्म के विषय में जानकारी के लिए जैन धर्म सम्बन्धी किताबों का अध्ययन करना शुरु किया। जैन धर्म से वो इतना प्रभावित हुए कि अपनी पत्नी का नाम भी जैन रख दिया। ईसाई होते हुए भी वो चर्च में नही जाते हैं तथा स्वयं को जैन तथा पंचमहाव्रत धारी (सत्य,अहिंसा, अस्तेय, अपरिग्रह और ब्रह्मचर्य का पालन करने वाला) कहते हैं।

स्वंय जैन बनकर उन्होंने शाकाहार के प्रचार का संकल्प किया। सैक्सी पाप सिंगर मेडोना ने भी माईकेल टोबायस की प्रेरणा से शाकाहार को अपनाया। माईकेल के अनुसार मांसाहारी आंख होते हुए भी अंधे की तरह है जो जीते जागते प्राणी के अन्दर के जीव को देखते नहीं इसीलिए उसका भक्षण करते हैं। मांसाहारी समझता है कि अन्य सभी जीव उसके खाने के लिए हैं और यही विचार उसे अहँकारी बना देता है।

माइकेल टोबायस अमेरिकी समाज में हिंसा के ताण्डव से चिन्तित हैं। वहां के बालक रोज सात से आठ घंटा टेलिविजन देखते है। टेलिविजन में दिखाए जाने वाले हिंसा के दृश्य उन बच्चों के दिमाग को विकृत बना रहे हैं। वहाँ पर हाई स्कूल के बच्चे गन को खिलौने की तरह प्रयोग करते हैं। समाज में तथा विशेषतया बच्चों में बढ़ती हिंसक प्रवृति से अमेरिकी तथा यूरोपियन लोग बेचैन हैं। वहाँ की कांग्रेस में फिल्मों तथा टेलिविजन में हिंसा के दृश्यों में रोक लगाने की चर्चा हो रही है। माईकेल का मानना है क्योंकि हिंसा की उत्पति टेलिविजन द्वारा हुई है [illegible] टेलिविजन के माध्यम से ही हिंसा को रोका भी जा सकता है।

विधि की विचित्रता तो देखिये जहाँ माइकेल टोबायस नें अनेक अमेरिकियों को [illegible] बनाया है वही स्वयं के माता-पिता को पूर्ण रूप से शाकाहारी बनाने की चेष्ट। में पूरी तरह सफल नहीं हो पाए है। यद्यपि उनके माता- पिता नें दस वर्ष बाद मांस का त्याग कर दिया है लेकिन मछली का नही। फिर भी माईकेल अपनी कोशिश जारी रखे है।

मनुष्य कर्म से ही ब्राह्मण होता है, कर्म से ही क्षत्रिय होता है,

कर्म से ही वैश्य होता है और कर्म से ही शूद्र होता है।

संकलन

परमात्मा न किसी को सुख देते हैं न दुःख

परमात्मा निरंजन निर्विकारी होते हैं, परमात्मा न किसी को दुःख देते हैं और न ही सुख। उनमें कर्त्ता बुद्धि नहीं होती। परमात्मा की दृष्टि में सभी जीव एक समान होते हैं।

परमात्मा ही मोक्ष का रास्ता बताने वाले होते हैं।

परमात्मा सभी जीवों का कल्याण चाहते हैं।

प्रतिदिन परमात्मा की पूजा करने से अनन्त पुण्य की प्राप्ति होती हैं। परमात्मा की पूजा करने से हमारे कर्मों का क्षय होता है।

परमात्मा की पूजा करने से देवगति या मनुष्य गति उच्च का आयुष्य कर्म बंधता है।

राज्य की प्राप्ति होती हैं। देवराज इन्द्र का पद प्राप्त होता है।सौभाग्य, रूप, लावण्य प्राप्त होता है।

जो परमात्मा की पूजा त्रिकाल (तीनों टाईम) करता है। वह जीव तीसरे भव में मोक्ष दशा को पाता है। अधिक से अधिक आठ भव में मोक्ष दशा पाता ही है।उसका अर्धपुद्गल परावर्तन काल शेष रहता है। प्रतिदिन परमात्मा का पूजन करना चाहिए। ऐसे परमात्मा की पूजा-भावना-भक्ति करने से सभी दुःखों का नाश होता है और इष्ट फल की प्राप्ति होती है। अतः प्रिय बालकों आप प्रतिदिन परमात्मा का पूजन करो।

मुनिश्री हितेशचन्द्र विजयजी 'श्रेयस'

साभार रत्न राज अक्टूबर १९९६–

"स्वयं को जीतकर ही दुःखों से छुटकारा मिलेगा"
M/S ARBEITS INDIA
Export House Recognised by Govt. of India
Proprietor-Sanjib Bothra
8/1, Middleton Road, 5th Flr, R. No. 4, Cal - 71, ✆ 201029/6256/4750,
Telex : 021 2333 ARBI INFax No. : 0091-33290 174

हम, महावीर जयंति पर स्वयं को परखें

विश्व ज्योति भगवान महावीर के महान जीवन एवं उनके उदात्त सिद्धान्तों को संसार भर की आचार-विचारगत परम्पराओं में एक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। यह निर्विवाद सत्य है कि प्राणी मात्र की कल्याण कामना के साथ महावीर ने जिन लोकोपकारी सिद्धान्तों का निरुपण किया वे शाश्वत हैं, व्यक्ति के साथ-साथ समष्टि के जीवन में क्रान्तकारी परिवर्तन उन्हें उत्थानगामी दिशा देने वालें हैं।यही कारण है कि जिन महा पुरुषों के द्वारा विश्व मंगल को बल मिला,उन में प्रभु श्री महावीर शिखरथ हैं।

आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक धरातल पर महावीर ने एक ऐसी सौम्य क्रांति का सूत्रपात किया, जिसने अतीत में ही जागृति का संदेश नहीं फुंका, जो वर्तमान को भी सर्वतोमुखी जागृति के प्रेरणा मंत्र के रुप में आंदोलित कर रही है तथा भविष्य में भी युगों युगों तक अपने प्रभाव के मार्ग की ओर उन्मुख बनाती है।

महावीर का अहिंसा, अपरिग्रह और अनेकांत आदि का जो दर्शन है वह इतना उपयोगी है कि उसका अनुकरण निष्ठापूर्वक किया जाये तो सभी की सभी तरह की समस्या का सहज समाधान मिल सकता है। महावीर का अपरिग्रह तो स्वेच्छा से लाया हुआ साम्यवाद है, जहाँ परिग्रह के प्रति ममत्व का भाव ही समाप्त हो जाता है। सर्वत्र रहे हुए सत्य खण्डों को जोड़कर संपूर्ण सत्य दर्शन का महावीर का सिद्धान्त अनेकांतवाद है।

आज परिवार, समाज और राष्ट्र में जो विविध संधर्ष दिखाई दे रहा है उसके मूल में एकांत आग्रह का विष हीअधिक काम कर रहा है। अनेकांतवाद का दर्शन जब-जब जहां गौण हो जाता है तो समस्यायें घटनें की बजाय बढ़ने लगती हैं। अनेकांत के जीवन में जीनेवाला स्वयं स्वस्थ रहता है, साथ ही स्वस्थ समाज की संरचना करता है।

महावीर का दर्शन गंभीरता का दर्शन है और यह दर्शन ही भव्य व्यक्तित्व की दिव्य झलक देता है।महावीर ने ढ़ाई हजार वर्ष पूर्व जो ज्योति जगायी है, उस के शुभ प्रकाश में ही हम अपने को परखें, देखे, निर्णय लें। महावीर सिद्धत्व पा गये पर इस सिद्धि की महती प्रेरणा को हमने अपने विचार एवं आचार में किस रुप में लिया है, इसे आत्मालोचना का विषय बनायें। इससे नया सम्बल मिलेगा। जीवन में संतुलन स्थापित होगा, और आत्म-नियंत्रण की भावना बलवती बनेगी।

महेन्द्र मुनिजी "कमल"

साभार रत्न राज १९९६

शरीर नौका है, जीव नाविक है और संसार समुद्र है

जिसे महर्षिजन तैर जाते हैं।

महावीर वाणी

१. सत्य का सूर्य सभी के आंगन को प्रकाशित करता है। उसकी किरणें सर्वत्र विकीर्ण हो सकती है।

२. जो आश्रव अर्थात् बन्धन के कारण है, वे ही परिस्रव मुक्ति के कारण हो सकते हैं तथा जो मुक्ति के कारण हैं, वो ही बन्धन के कारण बन सकते हैं।

३. आत्मा सामयिक (समत्ववृत्ति) रुप है और उस समत्व भाव को प्राप्त कर लेना ही आत्मा का साध्य है।

४. सिर मुण्डा लेने से कोई क्षमण नहीं होता, ओंकार का जाप करने से कोई ब्राह्मण नहीं होता, जंगल में रहने से कोई मुनि नहीं होता और कुशचीवर धारण करने से कोई तापस नहीं होता। ब्रह्मचर्य से ब्राह्मण, ज्ञान से मुनि और तपस्या से तापस होता है।

५. किसी के प्राणों को पीड़ा देना अच्छा नहीं बल्कि दूसरों की पीड़ाकी रक्षा के लिये इतना ही सावधान होना चाहिये जितना कि अपने प्राणों के लिये।

६. जो संसार के स्वरुप से सुपरिचित है, निःसंग, निर्भय तथा आशा रहित है उसी का मन वीतराग-भावना से युक्त होता है और वही ध्यान में सुनिश्चित होता है।

७. जीवादि तत्वों के ऊपर श्रद्धा रखनी ही समकित है। उन तत्वों का गुणपर्यायों से जानना सम्यग्ज्ञान है और उनमें सर्वदा रमण करना चारित्र है। ये समकित ज्ञान और चारित्र ही मोक्ष मार्ग है।

८. स्वाध्याय द्वारा प्रशस्त ध्यान होता है, सर्व परमार्थ को जानता है, स्वाध्याय में प्रवर्तन से प्राणी क्षण क्षण में वैराग्य भाव को प्राप्तकरता है।

९. आत्मा पर ही विजय प्राप्त करनी चाहिये। आत्मा पर विजय प्राप्त करना कठिन

"अहिंसा से बढ़ कर कोई शस्त्र नहीं।"
M/s. Metropolitan Book Company
93, Park Street
Calcutta - 700 016
Phone : 29 2418, Resi : 464-2783

है। आत्म-विजेता इहलोक और परलोक में सुखी होताहै।

१०. हिंसा की विरति नहीं करने वाला हिंसा नहीं करने पर भी हिंसक है।

११. मोक्ष की वास्तविक साधना के आधार ज्ञान, दर्शन चारित्र ही है।

१२. भोगो में कर्म का उपलेप होता है, अभोगी कर्मो से लिप्त नहीं होता है, भोगी संसार में भ्रमण करता है, अभोगी उससे मुक्त हो जाता है।

१५. धर्म दीपक की तरह अज्ञान अन्धकार को दूर करने वाला है।

१६. जो एक जानता है, वह सबको जानता है और जो सबको जानता है वह एक को जानता है।

१७. धर्म चार द्वार है क्षमा, सन्तोष, सरलता और नम्रता।

१८. ज्ञान का प्रकाश इस जन्म में रहता है, पर जन्म में रहता है और दोनों जन्मों में भी रहता है।

१९. जो मनुष्य असत्य का पोषण करते है वे संसार को पार नही कर सकते है।

२०. जो व्यक्ति दुष्कर ब्रह्मचर्य का पालन करता है उसके चरणों में देव दानव, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस और किन्नर ये सभी नमस्कार करते है।

तित्थयर

जिन धर्म और संस्कृति की महक से सुरभित करने वाली पत्रिका तित्थयर (मासिक) के आजीवन सदस्य बनें।

आजीवन सदस्यता शुल्क- एक हजार रूपये

JAIN JOURNAL

One of its Kind, most Valuable, Quaterly research Journal on Jainism

Life membership - Rs. 2000/-

Yearly - Rs.60/-

श्रमण

बंगाल की भूमि में जैन संस्कृति के गौरव का प्रतीक श्रमण (बंगला) के आजीवन सदस्य बनिये।

आजीवन सदस्यता शुल्क - पाँच सौ रूपये

वार्षिक शुल्क - तीस रूपये

Cover & Picture Printed by the Courtesy of-

SRI RANJAN KUTHARI, ANTARCTICA GRAPHIC LTD.

1/A, Vidyasagar Street, calcutta-700 009 © 350 2173/5424

सपनों की हो
मजबूत बुनियाद
निवेश कर निश्चिंत रहें आप
आप सपने बुनते रहते हैं। और आपके सारे सपने, आकांक्षाएँ और आशाएँ जुड़ी रहती हैं वित्तीय स्थायित्व और सुरक्षा के संग-साथ।
यह आपके लिए सही मौका है जब आप अपने सपनों को साकार बनाने के लिए एक सुरक्षित स्थायी जमा योजना में अपनी बचत कर सकते हैं।
प्रूडेंशियल संपद — प्रूडेंशियल ग्रुप की स्थायी जमा योजना। चार सौ करोड रु० के इस विशाल संगठन में सम्मिलित हैं विख्यात कंपनियाँ — प्रूडेंशियल कैपिटल मार्केट्स लि०, प्रूडेंशियल मौली शूगर्स लि०, के एल जे प्लास्टिक्स लि०, प्रूडेंशियल फर्मास्यूटिकल्स लिमिटेड, प्रूडेंशियल श्री जगन्नाथ एग्रोटेक लि० और अनेक अन्य कंपनियां। अभी कार्यकाल के सिर्फ दस वर्ष हुए हैं और ग्रुप ने देश-विदेश में अपनी मौजूदगी का सिक्का जमा दिया है।
प्रूडेंशियल संपद स्थायी जमा योजना में निश्चिंत होकर निवेश कीजिए। और अपने सपनों को साकार होते देखिए।
Prudential
Sampad
FIXED DEPOSIT SCHEMES
Your Dreams. Our Schemes.
प्रूडेंशियल कैपिटल मार्केट्स लिमिटेड
1 व 2, ओल्ड कोर्ट हाउस कॉर्नर, कलकत्ता - 700 001
कार्यकुशलता से अर्जित विश्वास
Sobhagya/96

एक अच्छा संकल्प ही
बुराई की विदाई के मार्ग
खोल देता है ।

Pankaj Nahata

Oswal Manufacturers Private Ltd.

Manufacturers & Suppliers of

Garments & Hosiery labels

4, Jagmohan Mullick Lane
Calcutta-700007
✆ : (O) 2384755
(R) 2380817